www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 15 जनवरी 2017 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 15 जनवरी 2017 से 21 जनवरी 2017

माघ कृ. – 03 ● वि० सं०–2073 ● वर्ष 58, अंक 55, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर. आर. बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज, बटाला में नव सेमैस्टर एवं नव वर्ष के शुभारम्भ पर हुआ यज्ञ

आर आर बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज, बटाला में नव सेमैस्टर के एवं नव वर्ष के शुभारम्भ पर हवन यज्ञ का आयोजन कॉलेज की यज्ञशाला में किया गया। इस अवसर पर श्री राजेश कवात्रा, श्री सतीश सरीन एवं श्री विनोद सचदेवा वरिष्ठ सदस्य स्थानीय समिति विशेष रूप से उपस्थित हुए। समस्त प्राध्यापकगण, कर्मचारीगण एवं विद्यार्थियों ने यज्ञ में वैदिक मन्त्रोच्चारण सहित आहुतियाँ डालकर परस्पर एवं सबके लिए मंगलकामनाएँ दीं।

प्रिंसीपल प्रो. डॉ. (श्रीमती) नीरू चड्डा ने श्री रोजश कवात्रा, श्री सतीश सरीन एवं श्री विनोद सचदेवा का अभिनन्दन एवं धन्यवाद किया तथा मंगलकामनाएँ की। उन्होंने कहा कि परमात्मा कॉलेज को उन्नति को शिखर तक ले जाने में हमारे प्रयत्नों को सार्थक करें तथा हम सब मिल कर सहयोगपूर्वक कार्य करें। डीएवी के आदर्शों पर चलते हुए एवं आर्यरत्न पूनम जी द्वारा प्रदत्त मार्ग दर्शन से हम अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्षम हों। श्री सतीश सरीन ने भी प्रिंसीपल, प्राध्यापक वर्ग, कर्मचारी वर्ग एवं विद्यार्थियों को समस्त समिति की ओर से शुभकामनाएँ दीं एवं कॉलेज के विकास के लिए हर प्रकार से सदैव सहयोग देने का आश्वासन दिया।

श्रीमती राज शर्मा, को–आर्डीनेटर स्वामी दयानन्द अध्ययन केन्द्र ने सभी का इस अवसर पर पधारने के लिए धन्यवाद किया एवं शुभकामनाएँ दीं। शान्तिपाठोपरान्त कार्यक्रम का समापन हुआ।

महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत ने आनन्द चित्र कथा का विमोचन किया

हिमाचल प्रदेश के राज्यपाल डॉ. देवव्रत आचार्य ने डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी द्वारा लिखित 'आनन्द चित्र कथा' का विमोचन किया। इस अवसर बोलते हुए उन्होंने कहा कि महात्मा आनन्द स्वामी आर्य समाज के ही नहीं समस्त मानव जाति के लिए महान संत और सुधारक थे, उन्होंने वैदिक धर्म और आर्य समाज का प्रचार देश–विदेश में किया। वे महान स्वतन्त्रता सेनानी प्रखर पत्रकार, उच्च कोटि के लेखक और वैदिक विद्वान थे। उन्होंने मिलाप अखवार की स्थापना की जिसका स्वतन्त्रता आन्दोलन में बहुत बड़ा योगदान रहा। ऐसी महान सख्शियत पर पुस्तक की रचना कर डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी जी ने महान कार्य किया हैं।

महामहिम राज्यपाल जीन्द विश्रामगृह में रुके थे जहाँ उन्होंने डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी जी द्वारा रचित पुस्तक का विमोचन एक सादे समारोह में किया। इस अवसर पर जसबीर देसवाल एम.एल.ए, टेकराम कण्डेला, राज्यपाल के विशेष कार्यअधिकारी डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार, यज्ञवीर तथा आर्य समाजों के अनेक लोग उपस्थित थे।

डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी ने राज्यपाल महोदय का डी.ए.वी संस्थाओं की ओर से अभिनंदन किया। डॉ. देवव्रत आचार्य जी ने डॉ. विद्यार्थी की इस रचना हेतु प्रसंशा की। डॉ. विद्यार्थी द्वारा स्व रचित 'स्वच्छाग्रह मंत्र' नामक पुस्तिका भी राज्यपाल महोदय को भेंट की गई जिसे पढ़कर वे अत्यंत प्रसंन्न हुए तथा उन्होंने निर्देश दिया कि इस पुस्तक की प्रतियां भारी संख्या में छपवाकर हिमाचल प्रदेश और हरियाणा में बटवाई जाएँ जिससे माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का स्वच्छ भारत अभियान जन–जन तक पहुँचाया जा सके।

डीएवी पटियाला ने मनाया स्वामी श्रद्धानंद बलिदान दिवस

आर्य युवा समाज डीएवी पब्लिक स्कूल भूपिंदर रोड़ पटियाला द्वारा अमर बलिदानी स्वामी श्रद्धानंद जी के बलिदान दिवस पर वृद्धों को सम्मान देते हुए **'जीवन संध्या समारोह'** का आयोजन किया गया। समारोह के प्रारंभ में वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ यज्ञ किया गया। प्राचार्य, शिक्षकवृंद व विद्यार्थियों ने स्वामी श्रद्धानंद जी को श्रद्धांजलि देते हुए यज्ञाग्नि में आहुतियाँ प्रदान कीं। सुप्रसिद्ध लेखक व दार्शनिक स कुलवंत सिंह (ग्रेट ग्रैंड पैरंट) ने मुख्य अतिथि के रूप में समारोह की शोभा बढ़ाई। दीप प्रज्ज्वलन व डीएवी गान के साथ समारोह का शुभारंभ हुआ। प्राचार्य प्रभाकर ने अपने भाषण में बताया कि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने जीवन को अत्यंत पतन अवस्था से निकालते हुए देश, धर्म और मानव मात्र की सेवा में लगा कर समाज के सामने एक उच्च आदर्श स्थापित किया। उन्होंने अपने उपदेशों से युवा पीढ़ी के अन्दर आजादी प्राप्ति का जोश भरा। वे जीवन भर नारी उत्थान व देश में शिक्षा स्तर के विकास के लिए लगे रहे। प्राचार्य ने सत्र 2016–17 की उपलब्धियों के साथ स्कूल की वार्षिक रिपोर्ट भी पढ़ी।

इस अवसर पर प्रस्तुत सांस्कृतिक कार्यक्रम में नन्हें मुन्नों ने सर्वप्रथम वैदिक मंत्र व मधुर नृत्य प्रस्तुत किये। इसके साथ–साथ ग्रैंड पेरेंट्स के मनोरंजन के लिए कई मनोरंजक खेल भी करवाए गए। स्कूल के प्री–प्राइमरी विंग के प्रतिभावान छात्रों को सम्मानित किया गया। स्कूल की समाचार पत्रिका 2016 और विवरिणिका 2017 का लोकार्पण भी किया गया।

इस अवसर पर श्रीमती सरोज प्रभाकर, डॉ रमेश पुरी (सदस्य एलएमसी) एडवोकेट विनय वतराना (सदस्य एलएमसी), प्राचार्या संदीप रेनू, डीएवी ग्लोबल स्कूल, पटियाला विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित रहे।

अंत में प्राचार्य प्रभाकर ने आये हुए मेहमानों का धन्यवाद किया।

नववर्ष की शुभकामनाएं देते हुए राष्ट्रगान के साथ समारोह सम्पन्न हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 15 जनवरी 2017 से 21 जनवरी 2017

मनोबल, सत्य, यश, श्री

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मनसः काममाकूतिं, वाचः सत्यमशीय।

पशूनां रूपमन्नस्य रसो, यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।।

यजु ३९.४

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **विष्टुप्**।

● **(मनसः)** मन की **(कामं)** इच्छा–शक्ति को [तथा] **(आकूतिं)** संकल्प–शक्ति को [और] **(वाचः)** वाणी के **(सत्यं)** सत्य को **(अशीय)** प्राप्त करूं। **(पशूनां)** पशुओं का **(रूपं)** रूप, **(अन्नस्य)** अन्न का **(रसः)** रस, **(यशः)** कीर्ति [और] **(श्रीः)** श्री **(मयि)** मुझमें **(श्रयतां)** स्थित हो। **(स्वाहा)** एतदर्थ आहुति देता हूं, सत्क्रिया करता हूं।

मैं चाहता हूं कि मैं एक उत्कृष्ट मानव बनूं, मेरे अन्दर विविध शक्तियाँ अपने पूर्णरूप में निवास करें। मेरे मन के अन्दर प्रबल इच्छा शक्ति (काम) और संकल्प शक्ति (आकूति) हो। मानव इच्छाएं करता रहता है, परन्तु वे पूर्ण नहीं होतीं, यह इच्छा शक्ति की दुर्बलता का चिन्ह् है। योगी जन बताते हैं कि इच्छा शक्ति को बलवान् बना लेने पर मनुष्य जो इच्छा करता है वह पूर्ण होकर रहती है। वह इच्छा करता है कि अमुक पापी धर्मात्मा बन जाए, या अमुक रोगी का रोग दूर हो जाए, तो सचमुच वैसा ही हो जाता है। मन की दूसरी शक्ति संकल्प शक्ति है। संकल्प की दृढ़ता होने पर मनुष्य अपने व्रत से च्युत नहीं होता। जो व्रत एक बार धारण कर लेता है, अन्त तक उसका निर्वाह करता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से ब्रह्मचारी रहूंगा, तो उस पर दृढ़ रहता है। यदि वह संकल्प करता है कि मैं आज से धूम्रपान करना छोड़ता हूं, तो सचमुच उसका यह व्यसन छूट जाता है। इसके विपरीत जिनमें संकल्प शक्ति की दृढ़ता नहीं होती, वे नित्य नवीन–नवीन संकल्प करते हैं, और किसी न किसी बहाने उन्हें तोड़ते रहते हैं।

मेरी यह भी कामना है कि मेरी वाणी में सत्य हो। वाणी में सत्य तभी आ सकता है, यदि मन में भी सत्य हो। यदि मन में सत्य होगा, तो वह कर्म में भी आयेगा। इस प्रकार मनसा, वाचा, कर्मणा मैं सत्यमय हो जाऊं, यह मेरी आन्तरिक अभिलाषा है। पतंजलि मुनि ने कहा है कि जिसके अन्दर सत्य प्रतिष्ठित हो जाता है, उसे क्रिया–फलाश्रयत्व प्राप्त हो जाता है, उसकी वाणी अमोघ हो जाती है। उसकी वाणी से दिये गये आशीर्वाद सत्य सिद्ध होते हैं। मेरी वाणी में भी यह दिव्य शक्ति आये।

मेरी यह भी अभिलाषा है कि मुझे गाय आदि दुधारू पशुओं का दूध यथेच्छ मात्रा में मिले, जिससे उसके सेवन से प्राप्त होनेवाला सौन्दर्य मुझमें आये। मुझे सात्विक अन्नों से मिलनेवाला रस–रक्त भी प्राप्त हो। मुझे धर्म और सत्कर्म से प्राप्त होनेवाली कीर्ति भी मिले और मेरी श्री, मेरी शोभा, दिग्दिगन्त में फैले। उक्त सब कामनाओं और आदर्शों की पूर्ति के लिए 'स्वाहा' हो, सत्क्रियाओं और सत्यप्रयासों की निरन्तर आहुति पड़ती रहे। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

आनन्द गायत्री कथा

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में चर्चा हो रही थी कि शरीर बहुत समय बाद मिलता है और बहुत कठिनता से प्राप्त होता है। यह त्याग के योग्य नहीं है। यह देवपुरी, ऋषिपुरी और ब्रह्मपुरी है। यह मन्दिर है जिसके अन्दर प्रभु का दर्शन होता है। आत्मा जो शरीर के अन्दर आकर कर्म की रस्सी को पकड़ कर कभी ऊपर उठता है, कभी नीचे गिरता है। आत्मा चली जाए तो न मन देखती है, न रूप–तन्मात्रा काम करती है, न खुली आँख से दिखाई देती है।

जीवन का अभ्युदय ब्रह्मचर्य–आश्रम से होता है। गृहस्थाश्रम ईश्वर को पाने का उतना ही आवश्यक साधन है, जितना ब्रह्मचर्य तथा संन्यास–आश्रम। जो मनुष्य अपना लोक नहीं सुधार सका, वह परलोक भी नहीं सुधार सकता है। धर्म यह है कि पहले लोक का सुधार करो और फिर परलोक का। जिसका गृहस्थ सुखी नहीं, उसको संन्यासी बनकर भी सुख नहीं मिल सकता।

—अब आगे

हृषिकेश के आगे स्वामी रामतीर्थ जी का 'राम आश्रम' है। वह बहुत रम्य स्थान है। एक दिन मैं उसके पास जा रहा था तो देखा कि 'राम आश्रम' के बरामदे में एक साधु बैठा रो रहा है। मेरा मन है हँसोड़। लोगों का रोना मुझे पसन्द नहीं, मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं उसके पास गया इस विचार से कि उसे हँसाकर उसका दुःख दूर करूँ। जाकर पूछा– "बाबा! क्यों रो रहे हो? कोई कष्ट है क्या? कहीं पीड़ा होती है? सिर दुखता है?" साधु ने मेरी ओर देखा, आर्तस्वर में बोला– "नहीं, कुछ नहीं।" मैंने कहा– "फिर हुआ क्या? रोते क्यों हो?" साधु ने और भी उच्च स्वर में कहा– "पत्नी की याद आ रही है!" मैंने ज़ोर से हँसते हुए कहा "अरे? यह बात है तो साधु क्यों बने? किसी वैद्य, डॉक्टर या हकीम ने तुम्हें कहा था?" साधु बोला– "नहीं, यह बात नहीं। एक दिन पत्नी से मेरी लड़ाई हो गई। मुझे क्रोध आ गया, मैं संन्यासी हो गया। किन्तु अब..."

मैं हँसते–हँसते लोटपोट हो गया। किन्तु हँसने की बात तो नहीं, समझने की बात है। संन्यास–आश्रम अच्छा है, परन्तु अपने समय पर। संन्यास सुखी हो, इसके लिए पहले गृहस्थ को सुखी बनाना चाहिए।

एक थे महात्मा। कितने ही भक्त उनके पास आते थे। एक भक्त बहुत–से मेवे, मिठाई और अन्य खाद्य पदार्थ लेकर उनके पास आया। सबको लेकर एक ओर बैठ गया। महात्मा देर तक उनसे बात करते रहे। फल–मिठाई की ओर उन्होंने देखा भी नहीं। उनके विषय में बात भी नहीं की। भक्त पर्याप्त समय तक बैठे रहे और फिर उठकर चले आए। कमरे से बाहर आकर उन्होंने कहा– "कितना घमण्डी आदमी है! वस्तुओं की ओर देखा भी नहीं। मैं इतने पैसे व्यय करके लाया, परन्तु उनके विषय में बात तक न की!" महात्मा के कान थे पतले, उन्होंने सुन लिया। दूसरे दिन वही भक्त आया। वैसे ही मिठाई तथा फल लाकर उसने महात्मा के सामने रख दिये। महात्मा ने मिठाइयों को देखते ही उनसे बातें प्रारम्भ कर दीं– रसगुल्लों से, गुलाम–जामनों से, कलाकन्द से, लड्डुओं से, बर्फ़ी से, केलों, सन्तरों और सेबों से बातें करते रहे। भक्त उनका मुँह देखता रहा। उससे उन्होंने बात भी नहीं की। उसकी ओर देखा भी नहीं। पर्याप्त समय जन व्यतीत हो गया, तो भक्त तंग आकर कमरे से बाहर गया। बाहर आकर बोला– "कितना अभिमानी व्यक्ति है! इतना देर से बैठा हूँ। दूर से आया हूँ। मुझसे बात तक न की!" महात्मा ने यह बात भी सुन ली; पुकारकर बोले– "ऐ भक्त! भीतर आओ!" भक्त के आने पर बोले– "देखो, कल मैंने तुमसे बात की, फल और मिठाइयों से नहीं, तब तुमने उपालम्भ दिया। आज मैंने फलों और मिठाइयों से बात की, तुमसे नहीं, तब भी तुमने उपालम्भ दिया। वास्तव में तुम चाहते क्या हो?"

भक्त ने क्या उत्तर दिया, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं, किन्तु उन महात्मा की भाँति कितने ही पुरुष करते हैं। या तो वे लोक ही लोक की चिन्ता करते हैं या परलोक ही परलोक की। या तो भक्त को भूलकर मिठाइयों से बातें करते रहते हैं, या मिठाइयों को भूलकर भक्त से। दोनों ही अवस्थाओं में भक्त उपालम्भ देता है। यह संसार मिठाई और फल है। परमात्मा वह भक्त है जिसने इस फल और मिठाई

शेष पृष्ठ 09 पर

www.thearyasamaj.org

सत्यार्थ प्रकाश का बार–बार अध्ययन जीवन पथ का मार्गदर्शक एवं हितकारी

● मनमोहन कुमार आर्य

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ का निर्माण लोगों को वेदों व सत्य धर्म का परिचय देने के लिए प्रथम सन् 1874–75 में किया था। इस ग्रन्थ का संशोधित व परिवर्धित रूप उनके सन् 1883 में देहावसान के बाद प्रकाशित हुआ जिसका निरन्तर प्रकाशन व प्रचार हो रहा है। सत्यार्थ प्रकाश को वैदिक मान्यताओं का विषयानुसार वर्णन ग्रन्थ कह सकते हैं जो कि एक ग्रन्थ मात्र न होकर सत्य वैदिक मान्यताओं का प्रमुख धर्म ग्रन्थ है। इसमें तीन शाश्वत सत्ताओं ईश्वर, जीव व प्रकृति सहित मनुष्य के हर आयु के कर्तव्यों व सृष्टि उत्पत्ति से लेकर प्रलयावस्था तक तथा बन्धन–मोक्ष आदि अनेक विषयों का वर्णन है। हमने इस ग्रन्थ को पढ़ा है और इससे उत्पन्न ज्ञान व विवेक के आधार पर हम यह अनुभव करते हैं कि मनुष्य को सच्चा मनुष्य बनाने व संसार का यथार्थ परिचय कराने वाला इससे अधिक सरल व उपयोगी ग्रन्थ संसार में अन्य कोई नहीं है। यह अनुभव केवल हमारा ही नहीं है अपितु इसका अध्ययन करने वाले प्रायः सभी व अधिकांश लोगों का है जिसमें आर्यजगत के वरिष्ठ विद्वान पं. गुरुदत्त विद्यार्थी (1864–1890) भी सम्मिलित हैं। उनके जीवन का एक प्रेरणादायक प्रसंग ही लेख की भूमिका बना है। हम यहां यह भी कहना चाहते हैं कि सत्यार्थ प्रकाश में जो ज्ञानराशि है, उसका देश व जीवन के विभिन्न पहलुओं पर जो प्रभाव हुआ है उसका मूल्यांकन अभी तक नहीं हुआ है। यदि देखें तो सत्यार्थ प्रकाश ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्ति कर देश को उन्नति के पथ पर अग्रसर किया है।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश लिख कर सम्पूर्ण मानव जाति पर एक महान उपकार किया है। इस ग्रन्थ के प्रभाव से ही देश को स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, लाला लाजपत राय, महात्मा हंसराज, श्यामजी कृष्ण वर्म्मा, महादेव गोविन्द रानाडे, पं. रामप्रसाद बिस्मिल, शहीद भगत सिंह, आदि समाज सुधारक व देश भक्त मिले हैं। ऐसे ही कोटि कोटि लोग विगत 140 वर्षों में सत्यार्थ प्रकाश से प्रभावित होकर देश व जाति के लिए लाभकारी सिद्ध हुए हैं। यहां हम पं. गुरुदत्त विद्यार्थी जी के जीवन का सत्यार्थ प्रकाश से जुड़ा एक प्रसंग प्रस्तुत कर रहे हैं। पं. गुरुदत्त विद्यार्थी लाहौर में संस्कृत व्याकरण ग्रन्थ अष्टाध्यायी पढ़ाते थे और कक्षा के विद्यार्थियों से कहते थे कि प्रातः व सन्ध्या के पश्चात् एक घण्टा तक सत्यार्थप्रकाश अवश्य पढ़ा करो। वे कहते थे कि मैंने ग्यारह बार सत्यार्थप्रकाश को ध्यान से पढ़ा है और जब–जब इस ग्रन्थ को उन्होंने पढ़ा, उन्हें इसके नये–नये अर्थ सूझे। वे कहा करते थे कि यह खेद की बात है कि सत्यार्थप्रकाश को लोग कई बार नहीं पढ़ते। एक बार प्राणायाम की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा था कि प्राणायम असाध्य रोगों को भी दूर कर सकता है। उन्होंने बताया था कि कभी–कभी किसी स्थूलकाय व्यकित को यह प्राणायाम कुछ दुर्बल बना देता है परन्तु थोड़े समय के पश्चात् वह व्यकित सशक्त व स्वस्थ हो जाता है। उनका यह कथन था कि संसार में सबसे उपयोगी वस्तु निःशुल्क मिला करती है। अतः भयंकर रोगों की सर्वोत्तम औषधि वायु है और यह वायु प्राणायाम द्वारा औषधि का काम दे सकती है।

इसी से मिलता–जुलता एक संस्मरण उनके अभिन्न मित्र लाला जीवनदास ने अन्यत्र भी उल्लेखित किया है जहां वह लिखते हैं कि 'जितना अधिक वे स्वामी दयानन्द की पुस्तकों का अध्ययन करते थे, महर्षि के प्रति उनकी भक्ति उतनी ही प्रगाढ़ और वैदिक धर्म में उनकी श्रद्धा उतनी ही सुदृढ़ होती जाती थी। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश को कम से कम 18 बार पढ़ा था। वे कहते थे कि जितनी बार मैं इसे पढ़ता हूं मुझे मन और आत्मा के लिए कुछ न कुछ नवीन भोजन मिलता है। उनका कथन है कि "यह पुस्तक गूढ़ सच्चाइयों से भरी पड़ी है।''

हमें पं. गुरुदत्त विद्यार्थी के मात्र 26 वर्ष से भी कुछ कम दिनों के अति व्यस्त जीवन में 18 बार सत्यार्थप्रकाश को पढ़ना किसी आश्चर्य से कम दृष्टिगोचर नहीं होता। जिस व्यक्ति ने एम.ए. विज्ञान में अविभाजित पंजाब जिसमें वर्तमान का पूरा पाकिस्तान, भारत के पंजाब, हिमाचल, हरियाणा व दिल्ली के भी कुछ भाग शामिल थे, में सर्व प्रथम स्थान प्राप्त किया हो व अपने अध्ययन काल में ही अनेकानेक इतर विषयों का अध्ययन करता रहा हो, प्रवचन देता हो, पत्रों का सम्पादन करता हो, आर्यसमाज के सत्संगों व उत्सवों में प्रवचन करता हो व डी.ए.वी. आन्दोलन के प्रचार के लिए देश भर में भ्रमण व अपीलें करता रहा हो, उसका 26 वर्षों के अल्प जीवन काल में 18 बार सत्यार्थप्रकाश पढ़ना निःसन्देह आश्चर्यजनक है। सत्यार्थ प्रकाश का महत्व इसलिये भी है कि इसमें ईश्वर व धर्म सम्बन्धी अनेक यथार्थ तथ्यों का प्रतिपादन है जो समकालीन व इससे पूर्व के साहित्य में उपलब्ध नहीं होते। इसको इस रूप में भी समझ सकते हैं कि मनुष्य जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है, यह यथार्थ रूप में सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर ही हृदयंगम होता है। सच्ची अहिंसा की शिक्षा इस ग्रन्थ को पढ़कर मिलती है। जीवन के उद्देश्य मोक्ष के अतिरिक्त मोक्ष प्राप्ति के साधनों को भी तर्क–वितर्क के माध्यम से समझाया गया है जिसे सच्चे मन से अध्ययन करने वाला स्वीकार करता है। यह पुस्तक ऐसी है कि जिसके खण्डन में अभी तक कोई ग्रन्थ तैयार नहीं हुआ जबकि अन्य ग्रन्थों की मान्यताओं पर उसी मत के अनुयायियों में मतभेद पाये जाते हैं और कइयों में तो तर्क की इजाजत ही नहीं है। अतः सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन से इसके अध्येता को जो लाभ प्राप्त होता है वह अन्य मत–मतान्तरों के अनुयायियों को प्राप्त नहीं होता।

पं. गुरुदत्त विद्यार्थी जी ने सत्यार्थप्रकाश के प्रति जो टिप्पणी की है वह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि वह एक असाधारण व्यक्ति थे। हमारे देश में एक प्रकार से एक अन्धपरम्परा चलती रही है कि विदेशी विद्वान कुछ भी कहें, उसे प्रमाणित स्वीकार किया जाता है और अपने देश के चिन्तकों व विचारकों के सत्य विचारों को भी विदेशी विद्वानों के भ्रमोत्पादक दृष्टिकोण से ही देखा जाता है। गुरुदत्त जी ने इस परम्परा को स्वीकार न कर विदेशी विद्व ानों के चिन्तन, मान्यताओं व निष्कर्षों पर आपत्तियाँ ही नहीं कीं अपितु उनके खण्डन में लेख व पुस्तकें लिखीं जिससे वे निरुत्तर हो गये। आज भी उनके उपलब्ध साहित्य को पढ़ने पर उनकी विलक्षण बुद्धि से प्रस्फुटित विचारों को पढ़कर लाभ उठाया जा सकता है। उन्होंने अपने जीवन में वेद और वैदिक साहित्य के प्रचार में जो योगदान दिया है वह चिरस्मरणीय है। उन्होंने वैदिक साहित्य को समृद्ध किया। विदेशी विद्वानों का मिथ्या दम्भ चकनाचूर किया। वैदिक विचारों को अंग्रेज़ी भाषा में प्रस्तुत कर अंग्रेज़ी शिक्षित वर्ग में सबसे पहले प्रचारित व प्रकाशित किया। उन्होंने जीवन का एक–एक क्षण वेदों के प्रचार व प्रसार में व्यतीत किया। हम अनुमान करते हैं कि यदि उन्हें 60–70 वर्ष का जीवन मिला होता तो वह इतना कार्य करते कि जिसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। उन्होंने अपने जीवन में महर्षि दयानन्द का अनुकरण कर उनके जैसा बनने का प्रयास किया था। वह अधिक से अधिक जितना कर सकते थे उन्होंने किया। उन्होंने 26 वर्ष की आयु में जितना कार्य किया है, उनसे पूर्व शायद ही किसी वैदिक विद्वान् व धर्म प्रचारक ने सारी दुनिया में किया होगा। हमारा यह भी अनुमान है कि यदि उन्हें 70 वर्ष का जीवन मिला होता तो वह 100 से अधिक बार सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन करते और इससे उनके व्यक्तित्व में जो श्रेष्ठता व महानता उत्पन्न होती, उसका हम केवल अनुमान ही कर सकते हैं। उनके प्रेरक जीवन का अध्ययन युवा पीढ़ी के लिए आदर्श है। सभी को उनका जीवन चरित पढ़कर प्रेरणा लेनी चाहिये।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः – 09412985121

अश्याम तं काममग्ने तवोतीऽअश्याम रयिꣳ रयिवः सुवीरम्।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते॥

यजु. 18.74

www.thearyasamaj.org

राजा पर धर्म का अंकुश जरूरी है

● महात्मा चैतन्यमुनि

राजा का जैसा चिन्तन और आचरण होगा वैसा ही उसकी प्रजा का भी होगा इसलिए हमारे मनीषियों ने राजा की नियुक्ति किए जाने पर विशेष ध्यान देने के आदेश दिए हैं। संसार में राजा के चुने जाने की बहुत सी प्रक्रियाएं प्रचलित रही हैं। कहीं–कहीं तो राजा स्वयं ही युद्ध द्वारा राज्य प्राप्त करता है मगर कई बार राजा की पीढ़ी दर पीढ़ी नियुक्ति की जाती है। मगर महर्षि दयानन्द जी आम जनता द्वारा राजा का चुना जाना उपयुक्त सझते हैं। प्रजातांत्रिक ढंग से यदि राजा का चुनाव होगा तो वह निरंकुश नहीं हो सकता है। महर्षि जी इस बारे में छठे समुल्लास में लिखते हैं–'एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, किंतु राजा जो सभापति तदधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजसभा के अधीन रहे। यदि ऐसा न करोगे तो–**राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तस्याद्राष्ट्री विशं घातुकः। विशमेव राष्ट्रायाद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमति न पुष्टं पशुं मन्यत इति।** (शत0का0 13–2–3) जो प्रजा से स्वतंत्र स्वाधीन राजवर्ग रहे, तो राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे। जिस लिए अकेला राजा स्वाधीन वा उन्मत्त होके प्रजा का नाशक होता है, अर्थात् वह राजा प्रजा को खाए जाता है, इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए। जैसे सिंह वा मांसाहारी हृष्ट–पुष्ट पशु को मारकर खा लेते हैं, वैसे स्वतंत्र राजा प्रजा का नाश करता है, अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता, श्रीमान को लूट–घूंट अन्याय से दण्ड लेके अपना प्रयोजन पूरा करेगा। वेद के एक मंत्र (यजु0 20–8) से हमें राजा का प्रजा के साथ संबंधों का पता चलता है। राज्याभिषेक के समय राजा से मंत्र बुलाया जाता था–

पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदरमंसो, ग्रीवाश्च श्रोणी।
उरू अरत्नी जानुनी बिशोऽमेगांनि सर्वतः।।

अर्थात् राजा कोई अलग वस्तु नहीं। राजा का शरीर राष्ट्र है और प्रजाओं से मिलकर बना है। राष्ट्र उसका पृष्ठ वशं है तथा नाना प्रकार की प्रजाएं उसके नाना अंग हैं। महर्षि व्यास जी ने भी कहा है–**राजा प्रजानां हृदयं भरीयः प्रजाश्च राज्ञोऽप्रतिम शरीरम्।** अर्थात् प्रजा राजा का शरीर है और राजा उसके शरीर में हृदय के समान है। कामन्दकाचार्य जी ने (नीतिसार 6–3) राज्य के सात अंग माने हैं जिनमें राजा को भी एक अंग ही कहा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों में आठ प्रकार के राज्यों का उल्लेख किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण अध्याय आठ में लिखा है–**स्वस्ति साम्राज्यं, भौज्यं, स्वराज्यं, वैराज्यं, पारमेष्ठेयं, राज्यं, महाराज्यं, आधिपत्यममं समन्तपर्यायी स्यात्! सार्वभौमः सार्वामुषः आन्ताद् आपरार्द्धात्, पृथिव्यै समुद्रपर्यान्नाया एकराड् इति।।** इन पंक्तियों में आठ प्रकार के राज्यों का विवेचन किया गया है जिनमें से एक स्वराज्य भी है। महर्षि दयानन्द जी ने इसी के महत्व को हमारे सामने रखते हुए इसे सर्वोपरि बताया है। वेद में भी स्वराज्य की प्रशंसा में कहा गया है–

यदजः प्रथमं सबभूय स ह तत् स्वरात्यभियाय।
यस्मान्नान्यत् परममस्ति भूतम्।।
(अथर्व0 10–7–31)

वेद का यह मंत्र स्वराज्य की महिमा बताने वाला है। इसमें कहा गया है कि स्वराज्य से दूसरा और कोई श्रेष्ठ राज्य नहीं है। ऋग्वेद (5–66–6, 1–80–1) में भी स्वराज्य को ही सर्वोपरि राज्य बताया गया है क्योंकि यह राज्य प्रजातंत्रीय पद्धति का ही प्रतीक है। वेद में हमें अनेक ऐसे मंत्र मिले हैं जिनमें प्रजातंत्र को ही अच्छी राज्य व्यवस्था बताया गया है। प्रजातंत्र पद्धति में ही राजा के प्रति पूर्णरूप से अंकुश रह पाता है। प्रजा को अत्याचारी और अन्यायी राजा को राज्य से च्युत करने की व्यवस्था हुआ करती थी। वाल्मीकीय रामायण (अध्याय 33) में वर्णन है कि क्रोधी, कंजूस, मद्यपी, घमण्डी और धोखेबाज राजा की दुर्दिन में उसकी प्रजा सहायता नहीं करती है। वह न तो उसकी सेवा करती है न ही उससे डरती है। ऐसा राजा शीघ्र ही पदच्युत कर दिया जाता है। शतपथ ब्राह्मण (12–9–3) में राजा को पदच्युत करके देश से निर्वासित कर देने का उल्लेख है। इसी प्रकार पुराने समस्त राजनीति के विद्वानों ने राजा की शक्तियों को सीमित रखने तथा उसके कामी, क्रोधी एवं अत्याचारी होने की दशा में पदच्युत करने का आदेश दिया है। महाभारत में किसी ऋषि से किसी ने पूछा–

यः पापं कुरूते राजा काममोहबलात्कृतः।
प्रत्यासन्नतस्यतस्यर्षे! किं स्यात्पापप्रमाशनम्।।

अर्थात् हे ऋषे! जो राजा काम और मोह के वशीभूत होकर पाप करता है उसके लिए क्या करना चाहिए? ऋषि इसका समाधान बताते हैं–

दुराचारान् यदा राजा प्रदुष्टान्न नियच्छति।
तस्मादुद्विजते लोकः सर्पाद्वेश्मगतादिव।।
तं प्रजातानुवर्यन्ते ब्राम्हणा न च साधवः।
ततः संशयमाप्नोति तथा बध्यत्वमेव च।।

अर्थात् जब राजा दुराचारी हो जाए और समस्त प्रजा उससे ऐसे तंग हो जाए जैसे घर में आए सांप से हो जाती है तो समस्त प्रजाओं, ब्राह्मणों तथा सन्यासियों को उचित है कि उसकी आज्ञाओं का पालन न करें तथा अन्त में उसे मार ही डालें.... महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में कहते हैं कि कामी राजा और न्यायाधीश भी दण्डित किए जाने चाहिए। इस संबंध में वे लिखते हैं– प्रश्न–जो राजा वा रानी अथवा न्यायधीश वा उसकी स्त्री व्यभिचारादि कुकर्म करे, तो उसको कौन दण्ड देवे?

उत्तर–सभा। और उनको तो प्रजापुरुषों से भी अधिक दण्ड होना चाहिए।

प्रश्न–राजादि उनसे दण्ड क्यों ग्रहण करेंगे?

उत्तर–राजा भी एक पुण्यात्मा, भाग्यशाली मनुष्य है। जब उसी को दण्ड न दिया जाए, और वह दण्ड ग्रहण न करे तो दूसरे मनुष्य दण्ड को क्यों मानेंगे? और जब सब प्रजा और प्रधान राज्यधिकारी और सभा धार्मिकता से दण्ड देना चाहे, तो अकेला राजा क्या कर सकता है? जो ऐसी व्यवस्था न हो तो राजा, प्रधान और सब समर्थ पुरुष अन्याय में डूबकर न्याय धर्म को डुबोके सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जाएं, अर्थात् उस श्लोक के अर्थ का स्मरण करो कि, 'न्याययुक्त दण्ड ही का नाम राजा और धर्म है; जो उसका लोप करता है, उससे नीच पुरुष दूसरा कौन होगा?'

राजा को धर्म का ही प्रतीक माना गया है इसलिए उसका धार्मिक होना अर्थात् उस पर धर्म और न्याय का अंकुश होना बहुत जरूरी है। इसके लिए राजा के कार्यकलापों में धार्मिक नेता पुरोहित की अहम भूमिका हुआ करती थी। राजा का राज्याभिषेक करती बार राजा को राजा बनाने के लिए अन्य लोगों में पुरोहित भी होता था और उस समय राजा को एक पलाश वृक्ष की शाखा दी जाती थी। इस शाखा को 'पर्ण' और 'मणि' कहा जाता था। यही राज्य की थाती का सांकेतिक चिन्ह था। इस थाती को देने वालों को 'रत्नी' संज्ञा दी जाती थी। वह इनका आदर सत्कार कर के पृथ्वी माता या राष्ट्र माता की अनुमति प्राप्त करता था। और उसके बाद अनेक नदियों के मिश्रित जल से स्नान करने के बाद राजचिन्हों को धारण करके प्रतिज्ञा करता था–'यदि मैं प्रजा से द्रोह करूं तो अपने जीवन, अपने पुण्य फल, अपनी संतान आदि सबसे वंचित किया जाऊँ।' राजा के सिंहासन पर बैठने के बाद पुरोहित जल छिड़कते हुए कहता था–'देवताओ, अमुक बाप के बेटे और अमुक विशः के अमुक राजा को राजशक्ति के लिए दृढ़ बनाओ और जन राज्य के लिए इसे शत्रु रहित करो।' इसके बाद पुरोहित राजा की पीठ पर राजदण्ड से हल्की चोट करता था जिसका भाव था कि राजा भी दण्ड से रहित नहीं है। पुरोहित के महत्व को दर्शाने के लिए कहा गया है–

दैवाधीनं जगत्सर्वम् मन्त्राधीनाश्च देवताः।
ते देवा ब्रम्हाधीनारतस्मात् ब्रम्होव सर्वम्।

सारे जगत् का प्रशासन देवताओं (नेताओं) के आधीन है। ये देवता मन्त्रणा पद्धति के आधीन हैं। यह पद्धति ब्राह्मण के अधीन है, अतएव ब्राह्मण (पुरोहित) ही शासन का सर्वप्रथम स्रोत है। शतपथ (5–3–1–12) के अनुसार राज्याभिषेक के समय पुरोहित ही राज्य शक्ति के प्रतीक के रूप में एक खड्ग सर्वप्रथम राजा को देता था। ऐतरेय ब्रा0 (8–25) में कहा है कि देवता राजा द्वारा प्रस्तुत अन्न को बिना पुरोहित के नहीं खाता। श0ब्रा0 (1–4–6) में तो यहां तक कहा है कि बिना पुरोहित के राजा की कल्पना तक नहीं की जा सकती। ऋ0 (1–129–4) के अनुसार तो पुरोहित का एक कार्य युद्ध क्षेत्र में जाकर राजा को प्रोत्साहित करना तथा शत्रुओं पर बाणों की वर्षा करना भी बताया है। पुरोहित धर्म का मर्मज्ञ होता था और चाहे युद्ध हो चाहे शांति उसका कर्तव्य था कि वह राजा को धर्म का मार्ग बताए। पुरोहित ज्ञान और धर्म से इतना परिपूर्ण होता था कि अथर्व0 (3–19–1,2,3) के मंत्रों में उसके द्वारा घोषणा की जाती है कि–"जिनका मैं पुरोहित हूं, उनके लिए मेरा यह ज्ञान उनका बल और वीर्य को बढ़ाने वाला होवे। मैं न केवल राजप्रमुख को बल्कि सारे राष्ट्र को ओज, वीर्य, बल से तैयार करता हूँ ताकि वे शत्रु के बाहुबल को विदीर्ण कर सकें। जो शत्रु हम पर युद्ध लादते हैं (मैं ब्राह्मण) अपने ज्ञान से उन विपक्ष वालों को नीचे गिराता हूं और अपने पक्ष वालों को उन्नत करता हूं।' इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए तथा धर्म को उसका आधार बनाने के लिए धार्मिक विद्वान की बहुत अधिक अनिवार्यता थी तथा उस पुरोहित द्वारा ही राजा को उसके कर्तव्यों का निर्देश देते हुए राजगद्दी पर बैठने से पूर्व विधिवत् शपथ दिलाई जाती थी। उसे बार–बार प्रजा के हित के लिए परोपकार और धार्मिक भावना एवं पूर्ण न्याय के साथ राज्य चलाने का आदेश दिया जाता था। वेदों में इस प्रकार की प्रक्रियाओं का विशद विवेचन है–

इमं देवा असपत्न सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।। (यजु0 09–40) पुरोहित संसद सदस्यों से प्रार्थना करता है कि राजा को बड़े क्षात्र धर्म के लिए, बड़े ऐश्वर्य के लिए, बड़े जन राज्य के लिए तथा राजकीय पराक्रम और शत्रुरहितता के लिए अभिषिक्त करो। वह आगे शपथ दिलाते हुए कहता है–

आ त्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।
विशस्त्वा सर्वा वाच्छन्तुमा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्।।
(ऋ010–173–1)

हे राजन्! मैं तुझे लाया हूं, अन्दर आ और स्थिर रहकर राज्य का संचालन कर। तुझे समस्त प्रजानन सदा चाहते रहें और तुझसे राष्ट्र न गिरे। आगे और भी महत्वपूर्ण आदेश देते हुए वह पुनः कहता है–

भूभुर्वः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्यांऽसुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि शंऽस्य पशून्मे पाह्यथर्य पितुम्मे पाहि।। (ऋ0 10–1–73)
आ त्वा गन् राष्टं सह वर्चसोदिहि प्राङ् विशां पतिरेकराट् त्वं विराज।
सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमस्यो भवेह।।
त्वां विशी वृणतां रात्याय त्वामिमाः प्रदिशः पंच्चदेवीः।
वर्ष्मन् राष्टस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो वि भजा वसूनि।। (अथर्व0 3–4–1,2)

प्रजा की ओर से कहा जाता है कि हे तीनों लोकों के नर श्रेष्ठ राजा! तुम्हारे माध्यम से हम प्रजाजनों का कल्याण हो। तुम युद्ध में

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

www.thearyasamaj.org

बन्दर के हाथ दर्पण

(मन–बन्दर पर प्रज्ञ प्रशासन हो तब मोबाइल पर भाषण हो)

● **देवनारायण भारद्वाज**

"इन्द्राय शूषं हरिवन्तमर्चत" (अथर्व. 20.30.2) अर्थात् ऐश्वर्य के लिए सुखपूर्वक कष्टों को हरने वाले वीर राजा का पूजन करो। "तद्विष्णोः परमं पदꣳसदा पश्यन्त सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्।।" (यजु. 6.5) संसार का पालन करने वाले विष्णु परमेश्वर के जिस सर्वोत्तम स्वरूप को शूर वेद वेत्ता वीर पुरुष अपने नेत्रों से उसी प्रकार देखते हैं, जिस प्रकार वे सूर्य–प्रकाश में अपने खुले नेत्रों से सूर्य–दर्शन करते हैं। अतएव हरि एवं विष्णु दोनों ही समानार्थक बन जाते हैं। "स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रः" (सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम समु.) अर्थात् सब जग के बनाने से 'ब्रह्मा' सर्वत्र व्यापक होने से 'विष्णुः' दुष्ट–पथभ्रष्टों को दण्ड देकर के रुलाने से 'रुद्र'–वह एक ही परमेश्वर होता है और "स शिवस्सोऽक्षरस्स परमः स्वराद्।" (स.प्र. प्रथम समु.) अर्थात् मङ्गलमय और सबका कल्याण कर्त्ता होने से 'शिव' कहलाता है। सन्त तुलसीदास ने सृष्टिकर्ता परमेश्वर की पालनकर्ता शक्ति को 'हरि' नाम से तथा संहारकर्ता स्वरूप को 'हर' नाम से सम्बोधित किया है।

पौराणिक प्रसंग के अनुसार नारदमुनि ने कामदेव को जीत लिया। इन्द्र के प्रयत्न के बाद भी वे अपने लक्ष्य से डिगे नहीं, तो अपनी विजय की गाथा पूर्व से ही कामारि शिव को सुनाने चले गये। शिवजी ने उनकी "अभिमानः श्रियं हन्ति" (सत्यार्थ प्रकाश समु. 2) की दशा को समझते हुए नारदजी को सावधान किया कि वे अपनी इस उपलब्धि को विष्णु जी को न सुनायें, किन्तु वे मानने वाले कहाँ थे, अखिर पहुँच ही गये उनके पास।

तब नारद गवने सिव पाहीं। जिता काम अहमिति मन माहीं।।
मार चरित संकरहि सुनाए। अति प्रिय जानि महेस सिखाए।।
बार बार बिनवउँ मुनि तोही। जिमि यह कथा सुनायह मोही।।
तिमि जनि हरिहि सुनावहु कबहूँ। चलेहुँ प्रसंग दुराएहु तबहूँ।।

काम चरित नारद सब भाखे। जद्यपि प्रथम बरजि सिव राखे।।
करुनानिधि मन दीख बिचारी। उर अंकुरेउ गरब तरु भारी।।
वेगि सो मैं डारिहउँ उखारी। पन हमार सेवक हितकारी।।
मुनि कर हित मम कौतुक होई। अवसि उपाय करबि मैं सोई।।

सारांश यह कि नारद जी के गर्व को चूर करने के लिए अपने लोक से भी अधिक सुन्दर नगर की रचना कर दी। वहाँ के शीलनिधि राजा की सौन्दर्यवती कन्या विश्वमोहिनी का स्वयंवर सजा दिया। राजा ने कन्या को आशीर्वाद व भविष्य की जानकारी के लिए मुनि के समक्ष बैठाया। उसके स्वर्णिम भविष्य का वर्णन करते करते मुनि महाराज स्वयं ही उस पर मोहित हो गये और स्वयंवर से भगा लेने का निश्चय कर लिया। अपनी कुरुपता का बोध उन्हें था ही, सो वे विष्णु भगवान से ही उनका स्वरूप माँगने चले गये।

हरि सन मागौं सुन्तर ताई। होइहि जात गहरू अतिभाई।।
मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।।

विष्णु उत्कट अभिलाषा जानकर प्रकट हुए, और नारदजी की आन्तरिक मांग जिन शब्दों में फूटी, उसके अनसार विष्णु भगवान को उनकी सहायता करने में सुगमता हो गई। अपने लिए हरि सम्बोधन को ध्यान में रखते हुए उन्हें हरि का स्वरूप प्रदान कर दिया, अर्थात् हरि के पर्यायवाची बन्दर का मुखड़ा नारदजी को मिल गया। उन्हें पूरा भरोसा हो गया कि विश्वमोहिनी की जयमाला उनके गले में ही पड़ेगी; पर वह उन्हें छोड़कर आगे बढ़ जाती, वे फिर फिर उसके सामने जाकर अड़ जाते। "मर्कट बदन भयंकर देही। देखत हृदय क्रोध भा तेही।।" कृपालु भगवान विष्णु भी राजकुमार का शरीर धारण कर वहाँ पहुँचे। राजकुमारी ने सहर्ष उनके गले में जयमाल डाल दी, और वे दुलहिन को अपने साथ ले गये। "**तब हरगन बोले मुसेकाई। निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई।।**" मुनि ने जल–दर्पण में ओक कर अपना मुँह देखा, तब उनके क्रोध की सीमा नहीं रही। अत्यन्त विस्तृत वृतान्त को आगे नहीं बढ़ाते हैं, क्योंकि आधुनिक परिदृश्य में इतना ही पर्याप्त है। कहाँ मुनि नारद, कहाँ कपि मुख नारद, ऊपर से संसार में बन गये हास्य के पात्र।

सन्त शिरोमणि सूरदास भी इस तथ्य का अनुमोदन करने में पीछे नहीं रहे। वे भी गाने लगे– "**तजो मन हरि विमुखन को संग। जिनके संग कुमति उपजत है पड़त भजन में भंग।।**" हरि के विमुख कौन? वही जो योगी होकर भोगी बन जाये। जिसमें पशु–प्रवृत्ति जाग जाये। आगे अपने पद में सूरदास ने "**मर्कट भूषण अंग**" का उदाहरण देकर संकेत कर दिया कि यही पशु प्रवृत्ति है कि आप, आप ही चरे। बन्दर को हीरा–मोती–स्वर्ण का हार पहना दीजिये वह इसकी शोभा न समझ कर, दुर्लभ आकर्षक माला का एक–एक मनका तोड़ कर चखना प्रारम्भ कर देगा, और फेंक देगा। यही स्थिति आज के सभ्य मनुष्य की हो गई है। उसके हाथ में एक ऐसा उपकरण आ गया है जिसे 'मोबाइल' नाम से जाना जाता है। है तो यह दूरभाष यन्त्र (टेलीफोन), किन्तु सचलभाष न कह कर हर कोई पढ़ा–अनपढ़ इसे मोबाइल अर्थात् चंचल चलायमान ही कहता है। उसके इस कथन का ऐसा ही प्रतिफल दिखाई देता है। इसका प्रयोगकर्ता शरीर से तो "चरैवेति–चरैवेति" करता नहीं, किन्तु उसकी वाणी अब मन से भी अधिक चलने लगती है। एक मान्य सज्जन महीनों से अपने प्रिय मित्र से मिलने की कामना कर रहे थे। निश्चयानुसार वे मित्र के आवास पर आये। तीस मिनट बैठे; किन्तु एक के बाद एक दूरभाष वार्तायें आने के कारण पास बैठ कर बात दूर से करते रहे। जिह्वा ऐसी इन्द्रिय है जो ज्ञान व कर्म दोनों का ही साधन है। अतएव व्यञ्जनों का रसास्वादन और दूर से सम्वादन दोनों होते रहे, तब तक उनके चालक ने पूर्व निर्धारित कार्यक्रम का संकेत कर दिया, क्षमापूर्वक वे चल दिए और मित्र मिलन वार्ता हेतु हाथ मलते रह गये।

"जहाँ मोबाइल वहाँ स्माइल कहाँ" अर्थात् "जहाँ चित्त चलायमान वहाँ मुस्कान कहाँ?" हँसते हँसते काम करते हैं तो उत्तम परिणाम मिलते हैं, किन्तु अब तो हँसने के लिए सब काम छोड़कर मोबाइल पर ऊल–जलूल–प्रहसन पढ़ने या सुनने पड़ते हैं। मोबाइल दूर से बात कराता ही नहीं सुदूर स्वर्ग तक पहुँचा भी देता है। लोकप्रिय चिकित्सक आरोग्य महाविद्यालय में प्रोफेसर रहने के साथ ही एक पड़ोस के उपनगर में निजी चिकित्सालय चलाते थे। अपनी डाक्टर पत्नी के साथ कार चलाकर वहाँ जा रहे थे। मोबाइल की घन्टी बजी, उन्होंने वार्ता की, इसी बीच उनकी कार पुलिया से टकराकर नीचे गड्ढे में गिरी और उनके प्राण पखेरु उड़ गये। मोबाइल के साथ अब अनेक प्रविधियाँ जुड़ गई हैं। उनका पृथक पृथक विवरण प्रस्तुत करने से लेख को लेखमाला बनाना पड़ेगा। अस्तु कतिपय शब्दावली ही पर्याप्त होगी, जिससे उनका बोध हो जायेगा। एस.एम. एस, फेसबुक, वाट्सअप, सेल्फी आदि। दोनों कान में तार लगा कर मोबाइल पर गाने सुनने वाले लोग अपनी बाइक को किसी ट्रक या कार से टकरा देते हैं, यहाँ तक कि बन्द रेलवे क्रासिंग को पार करते समय गाड़ी से घिसटते हुए अपने टुकड़े टुकड़े करवाकर घर में चीत्कार करने को बाध्य कर देते हैं। धर्म के प्रथम लक्षण 'धैर्य' की तो मोबाइल ने नींव ही हिला दी है। घर से यात्रा पर प्रस्थान करने वाले बाल–युवा–प्रौढ़ यात्री से क्षण क्षण की पहुँच का पता किया जाता है; और शयन यान में आरक्षित शायिका पर वह और घर–बाहर उसके अनुरागी कोई भी नहीं सो पाते हैं।

मोबाइल की सेल्फी (स्वचित्री) ने एक नई आपदा खड़ी कर दी है। समाचार पढ़ा है कि किसी नहर मे जल–क्रीड़ा के लिए सात छात्र 'सेल्फी' के चक्कर में डूबकर मर गए। रूपवान हो या कुरूप सभी को अपना चेहरा देखने का लोभ होता है। एक प्रसिद्ध दार्शनिक ने अपने कक्ष में बड़ा सा दर्पण लगा रखा था, और स्नान के बाद वे उसे अवश्य देखते थे। शिष्य ने पूछ लिया– आप इतने सुन्दर तो हैं नहीं, जो रोज रोज दर्पण में अपना चेहरा देखने लगते हैं। उन्होंने शिष्य को समझाया– यही तो बात है– मैं अपनी कुरूपता को भाँप कर श्रेष्ठ कर्मों द्वारा उसे ढकने का प्रयत्न करता हूँ– लोग मुझे अच्छे स्वरूप में देखें। तो, गुरु जी! जो सुन्दर हैं उन्हें दर्पण देखने की आवश्यकता नहीं? गुरुजी ने कहा– है, वे देखें और निश्चय करें कि मेरी सुन्दरता पर मेरे कुकर्मों की आँच न आने पाये। मोबाइल बुरा नहीं उपयोगी है; बुरा उसका वह प्रयोगकर्ता है जो अविवेकी है और बुद्धि की नहीं मन की मानता है; और अंग्रेजी के मन की (monkay) पदवी प्राप्त कर लेता है, इसीलिये बन्दर मन को ठीक नचाने के लिए कलन्दर विवेक की आवश्यकता होती है। गम्भीरता छोड़ विनोद में लें तो हास्य प्रसंग से लेख की इति कर दी जाये। जंगल में बंदरों की संख्या बढ़ गयी। शाकाहारी होने से अन्य जानवरों को भय भी नहीं था। अस्तु वहाँ प्रजातन्त्र लागू कर राजा शेर को हटाकर एक मोटे बन्दर को राजा बना दिया गया। एक दिन भेड़िया हिरन को खींच ले गया। प्रतिनिधि मण्डल ने कपि राजा से शिकायत की। बन्दर वृक्ष की डाल डाल पर कूदने–फांदने लगा। हिरनों ने कहा, राजा बचाते क्यों नहीं? बन्दर राजा बोले– मैं खाली तो बैठा नहीं, तुम्हारे काम के लिए ही दौड़–भाग कर रहा हूँ। मन–बन्दर पर प्रज्ञ प्रशासन हो तब मोबाइल पर भाषण हो।

**'वरेण्यम' एम. आई. जी. भूखण्ड–45
अवन्तिका कालोनी, ए.डी.ए. रामघाट मार्ग
अलीगढ़ (उ.प्र.)–202001
मो. 09412239573**

www.thearyasamaj.org

स्वामी रक्षक माता पन्ना धाय

● डॉ. अशोक आर्य

भारत का गौरव इस बात से ही है कि इस देश में जहां भी तप, त्याग व संयम की आवश्यकता हुई, इस देश के प्राणी, इस देश के वीर वीरांगणाएं सदा आगे ही दिखाई दिये। अपनी आन के लिए सिर कटा दिये, धन–सम्पदा त्याग दी किन्तु आन को नहीं जाने दिया। ऐसे ही त्यागी तपस्वी भारतीयों में माता पन्ना धाय का नाम विश्व इतिहास में सितारे की तरह चमक रहा है।

आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व जब दिल्ली में हुमायुं का राज्य था, उस समय राजपुताना में अर्थात वर्तमान राजस्थान में छोटे छोटे विभिन्न भारतीय राजसत्ताएं थीं। ये रजपूत शासक जरा सी बात पर आपस में भिड़ जाते थे तथा सैकड़ों सैनिकों की गर्दनें कट जाती थीं। इस समय महाराणा संग्रामसिंह के पुत्र राणा विक्रमसिंह चित्तौड़ में राज्य कर रहे थे। वह एक अद्भुत योद्धा थे। इस कारण उनकी वीरता सम्बन्धी गीत आज भी राजस्थान की धरती पर गाते हुए वहां के लोगों को अति गर्व का अनुभव होता है।

जहां राणा संग्राम सिंह में दूरदर्शिता, वीरता, साहस, देशभक्ति व जनसेवा की भावना थी, वहां राणा विक्रमसिंह इन अनूठ गुणों से कोसों दूर थे। यह तो एक अत्याचारी के रूप में जाने जाते थे, इस कारण वहां की जनता इनके व्यवहार से अत्यधिक परेशान रहने लगी। राज्य की शक्ति उस की प्रजा तथा सेना होते हैं किन्तु प्रजा के साथ ही साथ इनकी सेना भी अत्यधिक दु:खी थी। समय के साथ पिसती चली जा रही सेना में भी धीरे धीरे विरोध की भावना प्रबल होती चली जा रही थी। अव्यवस्था यहां तक जा रही थी कि जिस स्थान पर भी जा कर लोगों से कोई चर्चा होती तो ऐसा भान होता कि लोगों में भारी अशान्ति तथा अपने शासक के प्रति विरोध की भावना प्रबल हो रही है। सब ओर अशान्ति ही अशान्ति दिखाई देने लगी। इस सब का परिणाम यह हुआ कि इन्हें पद्च्युत कर दिया गया। इन्हें राज गद्दी से हटा दिया गया, उतार दिया गया। परिणाम स्वरूप विक्रमसिंह राज–काज से विहीन हो गये तथा इन के स्थान पर राणा उदयसिंह को यहां की राजसत्ता सौंप दी गयी। अब राणा उदय सिंह यहां के शासक थे।

चित्तौड़ की सत्ता राणा उदयसिंह को सौंप तो दी गई किन्तु अपनी अल्पायु के कारण वह राज्य व्यवस्था टीक से करने के लायक अभी न थे। इस कारण उनका सहयोग करने, उनका मार्ग दर्शन करने तथा उन के नाम से राज्य का संचालन करने के लिए किसी व्यक्ति की आवश्यकता थी। अतः इस विचार से कि जब तक राणा उदयसिंह सयाने हो जावें तब तक के लिए राज्य की सब व्यवस्था, सब प्रबन्ध बनवीर के हाथों में दिया गया। यह बनवीर राजा के, राणा के परिवार से न था किन्तु राज्य में उसको उत्तम स्थान प्राप्त था और दरबार में अच्छा रोब भी रखता था। राणा उदयसिंह माता पिता विहीन बालक था। पिता युद्ध के मैदान में मारे जा चुके थे जबकि माता भी इस संसार को त्याग कर परलोक गमन कर गई थीं। ऐसे माता पिता विहीन बालक का लालन पालन का दायित्व पन्ना नाम की एक धाय के कन्धों पर था। वह ही इस बालक की देख रेख किया करती थी। वह इस बालक उदयसिंह और अपने बालक में कुछ भी अन्तर न करती थी, अपने बच्चे का सा पूरा प्यार व स्नेह पन्ना धाय से उसे मिल रहा था। वह न केवल उसके खाने पीने का ही ध्यान रखती अपितु सुलाती भी अपने ही पास थी, सदा रखती भी अपने ही पास, अपनी ही आंखों के सामने। इस का ही परिणाम था कि उदय सिंह को भी पन्ना में अपनी माता की मूर्ति दिखाई देती थी। वह पन्ना से बहुत प्रेम करने लगा तथा इस प्रेम के कारण वह उसे माता ही कहने लगा। इस पन्ना धाय के पास एक अपनी कोख से जन्मा पुत्र भी था। पन्ना के अपने इस पुत्र का नाम था चन्दन। ये दोनों भाई आपस में सगे भाईयों के समान हंसते–खाते व खेलते थे।

बडे ही उत्तम ढँग से राज्य संचालन की व्यवस्था के कारण बनवीर को सब चाहने लगे थे। अतः धीरे धीरे बनवीर का मन भी लालच से भर गया। अब वह सोचने लगा कि एक तो राज्य का पूरा बोझ उस पर है तथा नाम उदयसिंह का चलता है। दूसरे जिस राणा विक्रमसिंह को पद्च्युत किया गया है, वह भी कहीं किसी प्रकार की चाल चलकर उसके लिए कोई संकट न खड़ा कर दे। इसलिए क्यों न इन दोनों को मारकर अपने मार्ग से हटा दिया जावे। इस प्रकार दोनों के समाप्त होने के पश्चात पूरी राजसत्ता उसकी अपनी होगी तथा वह स्वेच्छा से शासक रूप में कार्य करने का अधिकारी हो जावेगा, तब उसे किसी प्रकार की कोई रोक टोक न होगी। एक लम्बे विचार के पश्चात उसने अपनी इस योजना को क्रियात्मक बाना पहनाने का निश्चय किया। इस कार्य को करने के लिए वह किसी अन्य पर विश्वास न करता था, इस कारण उसने यह कार्य किसी अन्य से करवाने के स्थान पर स्वयं ही सम्पन्न करने का निर्णय भी ले लिया क्योंकि वह जानता था कि उसके साथ भी धोखा हो सकता है तथा सत्य खुल जाने पर उसकी अपनी जान को भी खतरा हो सकता है। उदयसिंह राज्य का असली अधिकारी होने के कारण अपने राजा की हत्या की योजना पर अन्य कोई कैसे काम कर सकता था?

जब मन में लालच आता है तो मानव धूर्त बन जाता है। उस में सत्य–असत्य, न्याय–अन्याय की परख की शक्ति समाप्त हो जाती है। कुछ ऐसा ही बनवीर के साथ हुआ तथा उसने अपनी धूर्तता का प्रमाण देते हुए, अपनी लालची प्रवृत्ति का प्रमाण देते हुए, अपनी देशभक्ति को ताक पर रखते हुए, उसने अवसर पाकर एक रात को नंगी तलवार अपने हाथ में ली तथा सीधे विक्रमजीत सिंह के कमरे में जा पहुंचा। विक्रम इस समय गहरी नींद में था। अन्यायी बनवीर ने युद्ध के सब नियमों को ताक पर रखते हुए, निहत्थे, शस्त्र विहीन तथा सोये हुए इस विक्रम पर वार किया तथा अन्यायी ने उसके शरीर को दो टुकड़ों में बांट दिया।

बनवीर ने यह हत्या करते हुए यह सोचा था कि कोई उसे देख नहीं रहा। केवल एकान्त का ही अनुभव करके वह उस कमरे में गया था किन्तु यह उस का दुर्भाग्य ही था कि राज्य का एक अनुचर, विक्रम का एक सेवक, जो देश के प्रति अपार भक्ति अपने अन्दर समेटे था, उसने बनवीर को यह हत्या करते हुए देख लिया। उसे यह समझते देर न लगी कि यह बनवीर लालच से भर गया है। अभी तो इसने विक्रम का ही खून किया है, इसके पश्चात राणा उदयसिंह की बारी आने वाली है। उस के अन्दर की स्वामिभक्ति जाग उठी, उसने स्वामी का नमक खाया था, वह नमक को ऋण समझता था तथा नमक की पूरी कीमत अदा करना अपना धर्म समझता था, बनवीर के कुकृत्य को देखकर एक बार तो वह कांप गया था किन्तु तत्काल उसने उदयसिंह को बनवीर के हाथों से बचाने की योजना बनाई। एक क्षण भी नष्ट किये बिना वह दौड़ता हुआ माता पन्ना धाय के पास गया। इस समय पन्ना अपने प्रिय चन्दन को छाती पर तथा प्यारे उदयसिंह को साथ में लिये निद्रा की गोद में थी।

इस सेवक ने तत्काल पन्ना को झिंझोड़ते हुए जगाया। जगाते ही जल्दी से उसे बताया कि विक्रमसिंह की हत्या करने के पश्चात हाथों में खून से सनी तलवार ले कर बनवीर इधर ही चला आ रहा है। ऐसा लगता है कि सम्भवतया वह राणा उदयसिंह की भी हत्या कर देगा। वह किसी भी समय यहां पहुंच सकता है। इस अल्प समय में शीघ्र ही कोई ऐसा उपाय किया जावे कि चित्तौड़ अधिपति राणा उदय सिंह की रक्षा हो सके। अल्पायु राजकुमार तो स्वयं अपने बचाव के लिए कुछ कर नहीं सकते। अतः हे माता! तुम्हीं उसकी रक्षा का कोई उपाय सोचो। यह बात सुनते ही पीले पड़े अपने चेहरे के साथ पन्ना थर थर कांपने लगी, उस की आंखों के सामने अन्धेरा छाने लगा, उसे कुछ सूझ न रहा था कि वह क्या करे? परन्तु दूसरे ही क्षण उसका चेहरा खिल उठा। उसने कुछ निर्णय ले लिया। उसे इस प्रकार का ही एक अन्य उदाहरण स्मरण हो आया, जब अपने स्वामी के बालक की रक्षा करते हुए माता यशोदा ने अपने ही बच्चे को बलि के लिए सौंप दिया था। जब यशोदा अपने बच्चे के लिए अपने जिगर के टुकड़े का बलिदान दे सकती है तो पन्ना क्यों नहीं? मैं भी अपने जिगर के टुकड़े का बलिदान देकर इस राणा की रक्षा करूंगी। यह सोचते ही उस का चेहरा खिल उठा था। वह तत्काल आगन्तुक सेवक से बोली "अपने जीते जी मैं कभी उदय की हत्या न होने दूंगी। मेरे होते ऐसा कभी नहीं हो सकता।" सेवक ने पुनः

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org

प्राप्तं प्रापणीयं

● **यश वर्मा,**

योगदर्शन का एक सूत्र है:–

प्राप्तं प्रापणीयं, क्षीणः क्षेतव्याः, क्लेशाः, छिन्न श्लिष्टपर्वा भवसंक्रमा।। 1.26।।

इस सूत्र के जो पहले दो शब्द हैं, विशेष ध्यान देने योग्य हैं। **प्राप्तं** अर्थात् प्राप्त करना है, किसे, **प्रापणीयं** जो प्राप्त करने के योग्य है। कौन है वो जो हमारे प्राप्त करने के योग्य है? वह है परमेश्वर! लेकिन परमेश्वर ने तो जब मनुष्य को बनाया तो उसके साथ इच्छाओं का अंबार लगा के संसार में भेज दिया। एक इच्छा पूर्ण होती है तो दूसरी इच्छा उत्पन्न हो जाती है, दूसरी के बाद तीसरी चौथी.....।

एक बात तो अवश्य है कि यदि इच्छा ही न हो तो जीवन जीने का आधार ही समाप्त हो जाए। सभी इच्छा पूर्ति के लिए ही तो कार्य कर रहे हैं। जो जितना पुरुषार्थ करता है, उतना पा लेता है। यदि सफल होना है, तो चार बातें आवश्यक हैं। पहला, अत्यन्त पुरुषार्थ, अर्थात् इतना अधिक पुरुषार्थ कि जिसमें कोई न्यूनता नहीं है। जब मनुष्य पुरुषार्थ करता है तो कई बाधाएँ, समस्याएँ, कठिनाइयाँ, विपत्तियाँ भी आती हैं। ऐसी स्थिति में जो उनका सहनशीलता से, बिना घबराए, उसका सामना करता हुआ, समाधान कर लेता है तो वह **घोर तप** की श्रेणी में आ जाता है। इसके साथ–साथ **उत्तम विधि** भी आवश्यक है, उत्तम विधि जब तक नहीं होगी, सफलता जितनी मिलनी चाहिये वह नहीं मिलेगी। इन तीनों के साथ अनुकूल साधनों को भी अपनाना होगा। इन सभी साधनों को अपना कर कोई डॉक्टर, इंजीनियर, आडीटर, अधिकारी, उद्योगपति, व्यापारी, कर्मचारी, खिलाड़ी, नेता, अभिनेता कुछ भी बन जाता है। इन उपलब्धियों को प्राप्त कर लेना क्या उचित–यथार्थ होता है। यदि यथार्थ होता तो उसको तृप्ति, संतोष, निर्भयता, स्वतंत्रता सुख हाथ लगता। परन्तु वास्तव में ऐसा होता तो नहीं है।

बहुत सारे लोग तो यहाँ तक भी कह देते हैं कि परमात्मा ने पता नहीं यह संसार हमें दुख देने के लिए क्यों बना दिया। ऐसा कहने के पीछे उनका ज्ञान कार्य करता है। उन्हें सही जानकारी नहीं है। जो अज्ञानी मनुष्य होता है वह दूसरों को दुःख देता है। फिर ईश्वर तो सर्वज्ञ और न्यायकारी है, वह कैसे किसी को दुख दे सकता है। कर्मों के अनुसार सुख–दुख मिलता है। हाँ यदि परमात्मा सृष्टि की रचना न करता तो आत्माएँ मूर्छित सी अवस्था में पड़ी रहतीं। आत्मा में ऐसा सामर्थ्य नहीं कि वह स्वयं अनुभूति कर सके अन्यथा तो ऐसे है जैसे कोई व्यक्ति कोमा में पड़ा हो। ईश्वर तो महा दयालु है जिसने हमें आनन्द अनुभव करने का अवसर प्रदान किया है। साथ में वेद के द्वारा यह शिक्षा भी दे दी कि किस प्रकार जीवन यापन करना है। केवल मनुष्य नहीं बनना यानी केवल शिक्षा प्राप्त करके सुख नहीं पाना बल्कि देव बनना है यानी विशेष शिक्षा प्राप्त करके आनन्द की प्राप्ति करनी है। जो देव है उसमें दया, सत्य, विनम्रता, मधुरता, आत्मीयता, न्यायकारिता आदि अनेक गुण आ जाते हैं।

वह ईश्वर तो हमारा परम मित्र है। हमारा हितैषी, प्रेरक है। कभी अन्याय नहीं करता। हमारी हर बात जानता है और कभी दूसरे को नहीं बताता। दुख सागर से बचाता है। इन्द्रियों के साथ वर्तमान कर्मों का कर्ता, भोक्ता जो जीव (आत्मा) है, इसका वही एक योग्य मित्र है अन्य कोई नहीं; क्योंकि ईश्वर जीव का अन्तर्यामी है। हम अच्छा या बुरा मन में प्रारम्भ करते हैं। यदि हम ईश्वर को मित्र बना लेते हैं तो वह हमें प्रेरणा देता रहता है और हम मान लेते हैं। जो उसे मित्र नहीं बनाता, ईश्वर प्रेरणा तो उसे भी देता है पर वह उसे मानता ही नहीं है।

प्रभु ने मनुष्य जन्म दिया है सांसारिक सुख व पूर्ण आनन्द प्राप्त करने के लिए। लेकिन हम लोग इस संसार में आते ही, संसार के लोगों को देखते व समझते ही भौतिक सुखों की ओर झुक जाते हैं। सारा पुरुषार्थ इसी ओर लगा देते हैं। सुख तो पा लेते हैं परन्तु आनन्द का पहलू अछूता रह जाता है। जहाँ सुख है वहाँ दुख भी है। सुख दुख सदा साथ साथ रहते हैं। हाँ, मात्रा घटती बढ़ती रहती है। कभी सुख अधिक है तो कभी दुख अधिक है। जन्म–मरण का चक्र चलता रहता है और साथ में सुख दुख का चक्र भी चलता रहता है। मनुष्य जन्म के पश्चात् कर्मानुसार बहुत सी भोग योनियों में भी जाना पड़ता है जहाँ दुख बहुत अधिक है।

इसलिए हमें **कृतकृत्य** को समझना है। **कृत** का अर्थ 'किया' और कृत्य का अर्थ 'करने योग्य'। अभिप्राय यह है कि जो जो करने योग्य है। अब प्रश्न है कि करने योग्य क्या है। **क्षीणाः क्षेत्व्या क्लेशाः** अर्थात् जो पाँच क्लेश हैं उनको नष्ट करना है। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश, पाँच क्लेश हैं। इन पांचों में भी मुख्य है **अविद्या**, हम तो कहते हैं, हम तो बहुत पढ़े–लिखे हैं। हमारे में तो बहुत विद्या है। अच्छा तो बताओ कि आप जानते हो नित्य–अनित्य, शुचि–अशुचि, सुख–दुख, आत्मा–अनात्मा के बारे में, केवल शब्दों के द्वारा नहीं, अनुभव करके बताओ। नहीं हुआ न अनुभव। अत्यन्त पुरुषार्थ करना पड़ेगा अविद्या दूर करने में, फिर आपकी अस्मिता अर्थात् आत्मा, मन, बुद्धि, शरीर को एक समझना, राग, द्वेष और अभिनिवेश अर्थात् मृत्यु का भय, यह चारों क्लेश भी दूर हो जाएंगे। जब ये क्लेश दूर होंगे तभी **श्लिष्टपर्वा भवसंक्रमः** अर्थात् बार–बार जन्म–मरण की कड़ियों से जकड़ी हुई संसार बंधन रूपी जंजीर को छिन्न अर्थात् नष्ट कर पाएगे। ऐसा तो कोई अध्यात्मिक व्यक्ति ही कर सकता है।

शब्द ज्ञान तो अच्छा है, बिना शब्द ज्ञान के गाड़ी नहीं चलेगी क्योंकि किसी चीज़ के बारे में पता ही नहीं होगा तो वह कार्य कैसे होगा। जैसे व्यायाम करना अच्छा है, परन्तु लाभ तो तभी होगा जब कोई व्यवहार में लाएगा अर्थात् व्यायाम करेगा। इसी प्रकार एक विद्वान् जिसे मन्त्र आते थे, एक योगी/ऋषि के पास गया और कहा कि मैं पढ़ा तो बहुत हूँ पर जाना नहीं। तब ऋषि न कहा कि तुम मन्त्रवित हो, आत्मवित बनो। **आत्मवित** वह है जो शब्दों के अर्थों को जानता भी है, मानता भी है, अपनाता भी है, व्यवहार में लाकर लाभ भी उठाता है। आत्मवित वही बन सकता है जो आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि को दिन में कुछ समय के लिए अपनाता है और यह कार्य तो 2–3 घंटे से अधिक कोई नहीं कर पाता। 6–7 घंटे नींद में जाते हैं। शेष 14 घंटे जो कि व्यवहार काल के हैं उसमें मन, वाणी व शरीर से हिंसा नहीं करता, सत्य को समझकर उस पर अडिग रहता है, चोरी नहीं करता, कोई झूठा श्रेय नहीं लेता, शरीर के प्रत्येक अंग से ब्रह्मचर्य का पालन करता है, आवश्यकता से अधिक सामान इकट्ठा नहीं करता, मन की, विचारों की, आत्मा की, शरीर की शुद्धि रखता है, पूर्ण पुरुषार्थ के पश्चात् जो मिल गया उसमें संतुष्ट रहता है, अपने कर्तव्य का पालन सहनशीलता व बिना घबराए कर पाता है, अच्छे शास्त्रों का व अपने कार्यों का स्वाध्याय करता है, सब कुछ ईश्वर को समर्पण भाव से करता है वह आत्मवित हो जाता है।

जो आत्मवित होता है, वह योगी बन जाता है। वह 'प्राप्तं प्रापणीयं' हो जाता है अर्थात् जो पाने योग्य परमेश्वर है उसे प्राप्त कर लेता है। आओ हम भी इस ओर अग्रसर हों तो हमें भी हमारे पुरुषार्थ अनुसार प्रभु अवश्य मि ेगे और हमें भी पूर्ण आनन्द की प्राप्ति होगी।

ओ३म् शांति–शांति–शांति।

मंत्री, आर्य समाज, मॉडल टाउन,
यमुनानगर।
9416446305

☞ *पृष्ठ 04 का शेष*

राजा पर धर्म...

हमारे शत्रुओं से हमारी रक्षा करो। सोमादि, ओषधि, स्वर्णादि धन और नैरोग्य का राज्य में बाहुल्य हो। हमारे पशुधन की आप रक्षा करो। आपका ऐश्वर्य सारे राज्य में व्यापक रहे। हमारे पिता आदि परिवार जनों की भी आप रक्षा करो। पुनः पुरोहित उसे आदेश देता है कि हे राजन्! यह राष्ट्र तुझको प्राप्त हुआ है, इसमें तू तेज के साथ उदय हो। पूजित होकर प्रजा का अनुरंजन करने वाला होता हुआ तू इसमें एकछत्र होकर विराज। सब दिशाओं में रहने वाली प्रजाएं तेरा आह्वान करें। तू इस राष्ट्र में नमनीय तथा सबको प्राप्त होने वाला हो। राज्य के लिए पांच दिशाओं में रहने वाली प्रजाओं ने तुझे चुना है। राज्य में ऐश्वर्य युक्त अच्छे स्थान पर राजधानी बना और शूरता से हमारे लिए धनों का विभाजन कर। शुक्राचार्य जी ने पुरोहित के पद को सर्वोपरि मानते हुए कहा है–पुरोधा च प्रतिनिधिः प्रधानः सचिवस्तथा...अर्थात मंत्रिमण्डल का निर्माण करती बार सर्वप्रथम पुरोहित का ही नाम आता है जो धर्म विभाग का मुखिया कहा गया है। उसका कार्य राजा को धार्मिक विषयों में सलाह देने का था। वह शांति और युद्ध दोनों अवस्थाओं में राजा का मित्र और पथप्रदर्शक हुआ करता था। शांति के समय वह राजा के धार्मिक कृत्य कराता और युद्ध के अवसर पर राजा की रक्षा और विजय के लिए प्रार्थना तथा युद्धभूमि में सैनिकों का उत्साह बढ़ाता था। ऐतरेय ब्राह्मण में आया है–

तस्मै निशः संजानते सम्मुख। एकमनसो यस्वै
विद्वाचरणग्रे राष्ट्रगीयः। पुरोहितः।।
तस्मै विश:स्वयमेवानयन्त इति। राष्ट्राणि वै विशः
राष्ट्राण्येवेनं। तत्स्वयमुपमान्तिा।।

अर्थात् जो राजा बिना पुरोहित के होता है वह शीघ्र नष्ट हो जाता है और जिस राजा के राष्ट्र की रक्षा करने वाला विद्वान पुरोहित होता है उसकी सब प्रजाएं उससे संतुष्ट रहती हैं.... इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्य के संचालन में पुरोहित की बहुत ही प्रमुख भूमिका हुआ करती थी। राजा की अनुपस्थि में सारे कार्य की व्यवस्था राजपुरोहित ही देखा करता था। उसका अधिकार क्षेत्र भी सर्वोपरि था। वह राजा और प्रजा दोनों ही ओर का प्रतिनिधि हुआ करता था। वह पूर्ण ज्ञानवान और धर्मात्मा हुआ करता था। महामना चाणक्य जी ने तो यहां तक कहा कि **राजा राष्ट्रकृतं पापं राज्ञः पापं पुरोहितः।।** अर्थात् राजा जो पाप करता है उसका फल पुरोहित को भी भुगतना पड़ता है। इसका भाव भी यही है कि पुरोहित पूर्णरूप से राज्य व्यवस्था के प्रति सजग और निष्ठावान रहता था।

पुरोहित को इतनी महत्ता देने का मुख्य कारण यही है कि वह राजा को धर्म के प्रति सदा प्रवृत्त और सजग रखे क्योंकि धर्म के मार्ग पर चलकर ही वह राज्य का अभ्युदय कर सकने में समर्थ हो सकता है। महर्षि दयानन्द जी महाराज इस संबंध में मनु महाराज का उद्धरण देते हुए सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में लिखते हैं–

'पुरोहितं च कुर्वीत वृणुयादेव चर्त्विजम्।
तेऽस्य गृह्याणि कर्माणि कुर्युर्वैतानिकानि च।।
(मनु0 7–78)

पुरोहित और ऋत्विज का स्वीकार इसलिए करे कि वे अग्निहोत्र और पक्षेष्टि आदि सब राजघर के काम किया करें और आप सर्वदा राजकार्य में तत्पर रहे, अर्थात् यही राजा का सन्ध्योपासनादि कर्म है, जो रात–दिन राजकार्य में प्रवृत्त रहना और कोई राजकाम बिगड़ने न देना।

वैदिक वशिष्ठ आश्रम
(महर्षि दयानन्द धाम),
महादेव, सुन्दर नगर, जिला मण्डी (हि0प्र0)

www.thearyasamaj.org

आर्यों, श्रद्धानन्द का बलिदान याद करो?

● डॉ. महेश विद्यालंकार

आर्य समाज का अतीत इतने तपस्वी, त्यागी और बलिदानी महापुरुषों से भरा पड़ा है। पढ़ सुन व सोच कर हृदय श्रद्धाभावना से भर आता है। इस संगठन ने जो देश, धर्म, जाति, संस्कृति वेद विद्या और के क्षेत्र में सत्य यथार्थ दिशा बोध कराया। उसके लिए इतिहास सदा ऋणी रहेगा। वैदिक धर्म के उद्धारक प्रचारक व प्रसारक पुण्यात्मा ऋषीवर को शत्–शत् नम और प्रणाम। जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रेरित होकर, जिन्होंने वैदिक धर्म की मशाल को जलाए रखने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। उस परम्परा की अग्रणी पंक्ति में स्वनाम धन्य स्वामी श्रद्धानन्द का नाम बड़े आदर व सम्मान से लिया जाता है।

स्वामी श्रद्धानन्द सच्चे अर्थों में ऋषि दयानन्द के उत्तराधिकारी थे। जिन्होंने जो आदर्श, मन्तव्य सिद्धान्त दिए उन्हें श्रद्धानन्द ने क्रियात्मक रूप दिया। उनकी अपने गुरु ऋषिदयानन्द के प्रति श्रद्धा निष्ठा, समर्पण प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय है। उनका शिक्षा, नारी उत्थान, शुद्धि राजनीति समाज–सुधार आदि क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान है। स्वामी श्रद्धानन्द तप–त्याग तपस्या दृढ़ता, आत्मविश्वास आदि की प्रतिमूर्ति थे। उन्होंने जो प्रेरक कार्य किए हैं, वैसे आज तक कोई नहीं कर सका। शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना इसका जीवन्त उदाहरण है। जिस तरह से और जिन परिस्थितियों में उस महापुरुष ने इस संस्था को बनाया, उसे सुनकर हृदय श्रद्धा से झुक जाता है। मगर पीड़ा ये है कि आज स्वामी श्रद्धानन्द का स्मारक गुरुकुल कांगड़ी अपने मूल उद्देश्यों, विचारों और प्रभाव की दृष्टि से हट और कट रहा है? यह चिन्तनीय है?

स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन के पूर्वपक्ष के चित्र में नास्तिकता, खानपान की अपवित्रता, आचारण की मलिनता, भोग–विलास की प्रधानता धर्म–कर्म, ईश्वर भक्ति आदि में तटस्थता मिलती है। देव दयानन्द के अद्वितीय, चुम्बकीय, व्यक्तित्व के दर्शन और अगाध पाण्डित्य के स्पर्श से मुंशीराम के ज्ञानचक्षु खुल गए। जीवन की दिशा बदल गई। कार्याकल्प हो गया। सुप्त–संस्कार जाग उठे। जीवन का सारा रंग ढंग बदल गया। हृदय में वैचारिक तूफान उठा। परिवर्तन आया, प्रभु कृपा हुई। पतित जीवन से उठकर प्रेरक जीवन की ओर चल पड़े। सत्य श्रद्धा व विवेक की भावना से ओत–प्रोत हो गये। मुंशीराम से श्रद्धानन्द बन गए।

यह क्रांतिकारी और अद्भुत प्रेरक आदर्श जीवन का पहलू युग–युग तक भूले भटके दुर्व्यसनी भोगी विलासी संसार को सन्मार्ग का पथिक बनने के लिए प्रेरित करता रहेगा। उनके जीवन का यह परिवर्तन असत्य से सत्य की ओर, अधर्म से धर्म की ओर और अश्रद्धा से श्रद्धा की ओर प्रेरणा देता रहेगा। स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन का यह पक्ष हम सब आर्यों को प्रेरणा व सन्देश दे रहा है। आर्यो! उठो, जागो, अपने स्वरूप को संभालो। जीवन तथा व्यवहार में जो अनैतिकता, अधार्मिकता, दुर्व्यसन व बुराईयां आ गई हैं। उन्हें छोड़ने का संकल्प लो। मिशन को आगे ले चलने के व्रती बनो। जीवन को पवित्र और श्रेष्ठ बनाने की भावधारा जागृत करो। सेवा व त्याग को जीवन में स्थान दो। मनुर्भव सच्चे अर्थ में मानव बनकर प्रभु की आज्ञा का पालन करो। यदि हम अपना सुधार तथा आत्म कल्याण करना चाहें तो स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन हमारे लिए प्रकाश स्तम्भ बन सकता है। ऊपर उठने के लिए इससे बढ़िया चरित्र और कोई न मिलेगा। इतने पतन से इतने ऊंचे उठे। इतिहास से लम्बी लकीर खींच दी। ऊंचाई की सभी बुलन्दियां छू ली। इसके पीछे संकल्प, दृढ़ता व विश्वास था जो कहा उसे कर दिखाया। उनकी करनी व कथनी में एक रूपता थी।

स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन के प्रेरक पक्ष आर्यसमाज के नेताओं, अधिकारियों, उपदेशको, पुरोहितों आदि सभी को सन्देश दे रहे हैं–जीवन को ऊंचा उठाओ। चरित्र को पवित्र बनाओ। आचार–विचार में सुधार लाओ। पद स्वार्थ व अहंकार को छोड़ो। ऋषि मिशन के लिए समर्पित भाव से सेवक बनकर कार्य करो। जब तक हमारा आचार विचार, व्यवहार और जीवन सुन्दर व श्रेष्ठ न होगा, तब तक हम दूसरों को प्रभावित और आकर्षित न कर सकेंगे। पहले के आर्यसमाज में चारित्रिक गरिमा होती थी। आज इसमें गिरावट आयी है। जीवन बोलता है। जीवन से जीवन बनता है। ऋषि के संपर्क में जो आया वह हीरा बन गया। आज इतने उपदेश, कथाएं, सम्मेलन, भाषण आदि होते है पर कही जीवन निर्माण नजर नहीं आता। शब्दों में खूब प्रचार हो रहा है। पहले के नेताओं अधिकारियों संस्थाओं के संचालकों, उपदेशकों और पुरोहितों में धार्मिकता व आध्यात्मिकता होती थी। जिसका स्थायी प्रभाव पड़ता था। आज सभी के जीवनों में ये दोनों चीजें घट रही है। मात्र प्रदर्शन रह गया है।। जब तक धार्मिकता और आध्यात्मिकता जीवन में न आवेगी तब तक सच्चे अर्थ में ज्ञान, वैराग्य, त्याग तथा पदत्याग की भावना न आ सकेगी। आर्यसमाज में जीवन मूल्यों की तेजी से गिरावट आ रही है। इसी कारण पद, स्वार्थ, अंहकार, विवाद, समस्या बढ़ रही है। ऋषि और आर्यसमाज पीछे छूट रहा है। व्यक्ति और उसका स्वार्थ आगे बढ़ रहा है। आज का आर्यसमाज सभा, संगठन संस्था आदि को अपने स्वार्थलाभ तथा महत्व को प्रदर्शित करने के लिए नियम कायदों को तोड़ कर प्रवेश कर रहा है। पहले ऐसा नहीं था। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना घर–बार पद सब कुछ ऋषि मिशन के लिए न्यौछावर कर दिया। हमारी आन्तरिक स्थिर बड़ी गंभीर, शोचनीय और चिन्ताजनक है। सर्वत्र अराजकता, अनुशासन–हीनता एवं स्वार्थलिप्सा तेजी से फैलती जा रही है। न कोई किसी की सुनता है, न मानता है।

ऐसी भयावह व चिन्तनीय स्थिति में अतीत व महापुरुषों के प्रेरक तप–त्याग तपस्या और बलिदान पूर्ण जीवन हमें व जाग्रत कर सकते हैं। आर्यो। प्रतिवर्ष महापुरुषों के जीवन घटनाओं, बलिदानों से संबंधित पर्व तिथियां आती हैं। हम लोग जलसे–जलूस लंगर तक सीमित करके अपने कर्त्तव्य को पूरा समझ लेते हैं। कहीं रचनात्मक, प्रभावात्मक व निर्माणात्मक चेतना तथा ललक नजर नहीं आती। जो जागरूकता और उत्साह होना चाहिए वैसा दिखाई नहीं देता। ये पर्व व बलिदान हमें जडता और निष्क्रियता से हटाकर कुछ करने की भावना जाग्रत करते हैं। आत्मचिन्तन की ओर प्रेरित करते हैं। सोच एवं विचार देते हैं– क्या खोया? कहा के लिए चले थे? कहां जा रहे हैं? स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान हमें पुकार रहा है। उनका संपूर्ण जीवन प्रेरित कर रहा है– उठो! जागो! संगठित हो जाओ। मिलकर चलो। ऋषि के मिशन को याद करो। परस्पर के विवादों और झगड़ों को त्याग आत्म विश्लेषण करो। चरित्र को ऊंचा उठाओ। अपने दायित्व और कर्त्तव्यों को संभालो। तुम्हारे ऊपर वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार की बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। आज चारों और भयंकर अविद्या, जड़ता, अन्धविश्वास ढोंग पाखण्ड आदि तेजी से बढ़ व फैल रहा है! वेद विद्या लुप्त होती जा रही है। धर्म भक्ति और परमात्मा व्यापार बन रहे हैं। सम्प्रदायों का जाल बिछ रहा है। नकली सन्त, महन्त, महाराज गुरु ज्ञानी आदि गली–गली फैल रहे हैं। दानवता अट्ठाहस कर रही है। मानवता रो रही है। नैतिक मूल्यों और मर्यादाओं का तेजी से क्षरण हो रहा है। संस्कृति व सभ्यता के नाम पर भौड़ा, नग्न व विद्रुप स्वरूप दिखाया जा रहा है।

ऐसी विकट स्थिति में आर्यो विचार करो। कौन देश–धर्म–जाति संस्कृति को सही विचार, दृष्टि और सोच दे सकता है। यही कहीं निर्दोष, विचार आदर्श तथा मूल्यों पर नजर टिकती है तो केवल वैदिक विचारधारा पर क्योंकि इसके चिन्तन में समग्रता एवं पूर्णता है। आज समय की मांग और जरूरत है समस्त आर्यजगत को वेद–भाव, विवाद और स्वार्थों को भुलाकर, अपने स्वरूप, उद्देश्य, व कर्तव्य को समझने की महापुरुषों ने जिन उद्देश्यों, आदर्शों, परम्पराओ, और वैदिक धर्म की धारा को अजग्र प्रवाहित रखने के लिए बलिदान दिए। अपना स्र्वस्व त्याग दिया। जीवन लगा दिए। अनेक दुःख व यातनायें सहीं। उनकी आत्मायें पुकार रही हैं। उनके बलिदानों को सार्थक करो। सेवक बनकर उनके कामों को आगे बढ़ाओ। जो विरासत में हमें विचारधारा और जीवन मूल्य मिले हैं। उनको फैलाना, आगे बढ़ाना हमारा पुनीत कर्त्तव्य है। कुछ करने कराने को संकल्प और व्रत ले। यही श्रद्धानन्द बलिदान दिवस की मूल चेतना प्रेरणा और सन्देश है।

BJ–129, पूर्वी शालीमार बाग
दिल्ली

www.thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 02 का शेष

आनन्द गायत्री कथा

को हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया। दोनों का ध्यान रखना चाहिए; दोनों में से किसी को भी भुलाना धर्म नहीं, त्यागना धर्म नहीं।

कुछ मनुष्य कह सकते हैं– यह तो अत्यन्त कठिन है। ईश्वर और संसार दोनों को साथ–साथ कैसे रखा जा सकता है? एक को भूले बिना दूसरे को अपनाया कैसे जा सकता है? किन्तु भाई, सुनो तो! कठिन कुछ नहीं! वेद भगवान् में इसका मार्ग भी बताया है। 'यजुर्वेद' के 40वें अध्याय में भगवान् अपनी अमृतवाणी के द्वारा कहते हैं, 'त्याग से भोग कर!'

अर्थात् भोगकर इस संसार को प्रयोग में ला। धन संचय कर, शिशुओं का पालन कर, मकान बना, व्यापार चला, राज्य प्राप्त कर, शक्ति बढ़ा, सम्मान के लिए संघर्ष कर, सबको ग्रहण कर, किन्तु त्याग की भावना से। कारावासी कारावास के कपड़े और बर्तन प्रयोग करता है। उन्हें स्वच्छ और सुथरा रखता है, सँभालता है, प्रयत्न करता है कि कोई चुराकर न ले जाए; किन्तु जब वह कारावास से मुक्त होता है, तब क्या अपने कम्बल से, अपने बर्तनों से, अपनी कोठरी से लिपट–लिपटकर रुदन करता है? इन पदार्थों को चिपटाता है? नहीं, क्योंकि वह कभी उन्हें अपना नहीं समझता है। यह है त्याग से भोग करने का अभिप्राय।

धन–संचय अवश्य करो, भवन–निर्माण करो, सन्तान की रक्षा करो, किन्तु जब विधवाएँ पुकार उठें, जब दुःखी जन चिल्ला उठें, जब अनाथों के अश्रुपात हों, जब देश पर, धर्म और जाति पर आपत्ति आ जाए, तब वस्तुओं को तुच्छ समझकर त्याग दो। यह है त्याग से भोग करने का अभिप्राय।

और त्याग से भोग करने की यह मनोवृत्ति पैदा कैसे होती है? उसका उपाय क्या है? उपाय है दो– एक गायत्री मन्त्र, दूसरा यज्ञ। गायत्री मन्त्र की बात अभी ठहरकर बताऊँगा। पहले यज्ञ की बात सुनो! 'शतपथ–ब्राह्मण' में महर्षि याज्ञवल्क्य से छः प्रश्न पूछे गए। उनका उत्तर देते हुए उन्होंने बताया कि यज्ञ से क्या लाभ है। कुछ मनुष्य कहेंगे कि आनन्द स्वामी, यह तू क्या यज्ञ और हवन की बात करता है? घी आगे ही महँगा है, खाने को मिलता नहीं, तू इसे अग्नि में आहुति देकर व्यर्थ नष्ट कर देने की बात कहता है? किन्तु सुनो मेरे भाई! संसार में कोई भी वस्तु विनाश को प्राप्त नहीं होती है। यह विज्ञान का सिद्धान्त है। और फिर आग में डाल देने से नष्ट होने के स्थान पर इसकी शक्ति सहस्र–गुणा बढ़ जाती है। सामने यह माइक्रोफ़ोन पड़ा है। इसमें क्या है जो ध्वनि को तीव्र कर देता है? विद्युत्! विद्युत् क्या है? आग। इस आग में पड़कर मेरा स्वर कितना तीव्र हो जाता है! विद्युत् या आग जितनी अधिक होगी, स्वर उतना ही तीव्र होगा। यह विज्ञान का सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त यदि समझ में न आए तो एक लाल मिर्च को लीजिये। दिल्ली में लोग लाल मिर्च बहुत खाते हैं। मिर्च के बिना इन्हें खाना अच्छा नहीं लगता।

(सुननेवाले मिर्चों की बात सुनकर हँस पड़े। स्वामी जी ने पास बैठी एक छोटी–सी बच्ची को कहा– क्यों विजय बेटी, तू मिर्च नहीं खाती?' विजय ने कहा– 'जी नहीं!')

क्रमशः....

☞ पृष्ठ 06 का शेष

स्वामी रक्षक माता...

अपनी बात दोहराते हुए बालक को बचाने का उपाय पूछा।

पन्ना ने कहा कि भाई देखो! मेरे पास यह मिठाई का एक टोकरा है। उदय को इस टोकरे में लिटाकर तुम वीरा नदी के किनारे ले चलो। यह सब कार्य तुम बड़ी चतुराइ तथा होशियारी से करना। मैं भी कुछ देर के पश्चात यहां से निकलूंगी तथा तुझे वहीं मिलूंगी! इस पर नौकर ने कहा कि उदय को तेरे पास न पाकर बनवीर क्या करेगा?, इस पर भी कुछ विचार किया क्या?

पन्ना ने तत्काल कहा कि अब उस निर्दयी हाथों बच पाना असम्भव ही दिखाई देता है "मेरा जो होगा पीछे देखा जावेगा। अभी तो जो मैंने कहा है, उसे झटपट करो।" यह सुन सेवक ने धीरे से उदयसिंह को टोकरी में रखा तथा बडी सावधानी से वीरा नदी की ओर चल दिया। अब पन्ना ने पहले से ही निश्चित की अपनी योजना पर कार्य आरम्भ कर दिया। वह तो निश्चय कर ही चुकी थी कि स्वामी की रक्षा के लिए कोई भी बलिदान कम है। वह किसी प्रकार का भी बलिदान देने को तत्पर थी। वह देश को सर्वोपरि मानती थी। अन्याय से चित्तौड़ को बचाने का निर्णय उसने ले लिया था अतः इसे कार्य रूप देने के लिए उसने अपने जिगर के टुकड़े चन्दन को उदय के बिस्तर पर सुला कर एक प्रकार से बलिवेदी की भेंट कर दिया तथा उसका शरीर कपडे से ढांपकर झटपट यह सब कार्य कर निश्चिन्त हो स्वयं भी सो गई।

सोना तो पन्ना का नाटक ही था, बस उसका बनवीर को यह दिखाने का एक यत्न मात्र ही था कि बनवीर क्या कर रहा है?, इस का उसे कुछ भी पता नहीं। अभी वह लेटी ही थी कि हाथों मे लहू से सनी तलवार लेकर बनवीर कमरे में आ घुसा। एक कत्ल के पश्चात तो वह आपा खो चुका था, उसकी अक्ल मारी जा चुकी थी। अतः आते ही, प्रवेश करते ही वह गरजते हुए, चिल्लाते हुए पन्ना से बोला कि "बता उदय कहां है?' अब पन्ना मूर्ति की भाँति शान्त थी किन्तु बनवीर ने हवा में तलवार लहराते हुए फिर पूछा, बता उदय कहां है।"पास मे उसका अपना बच्चा चन्दन सो रहा था अब उदय की रक्षा उसके अपने बालक के बलिदान से होने वाली थी, इस कारण पन्ना के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था। बस मात्र उंगली के इशारे से चन्दन की ओर संकेत कर दिया। संकेत मिलते ही बनवीर ने न तो बच्चे के मुंह से कपडा हटाया न ही कुछ परख की बस संकेत मिलते ही उसने अपनी तलवार का चन्दन के ऊपर जोर से वार किया। तलवार का वार होते ही बालक के मुख से एक हल्की सी चीख निकली तथा सब ओर खून ही खून दिखाई देने लगा। ये दो हत्याएं कर बनवीर ने मन ही मन अपनी सफलता पर खुशी अनुभव की तथा इस खुशी में ही वह पने स्थान की ओर लौट गया। अपनी आंखों के सामने अपनी सन्तान का कत्ल होते देख भी पन्ना अविचल खडी थी। वह जानती थी कि उसकी एक चीत्कार, उसका भयभीत हावभाव न केवल उसकी अपनी हत्या का कारण बनेगी बल्कि उसके कारण उदय का जीवन भी संकट में पड जावेगा। अतः हत्या के समय उसने बनवीर का किसी प्रकार से भी विरोध न करते हुए उसे यह भीपता न चलने दिया कि उदय तो लापता किया जा चुका है, बाहर भेजा जा चुका है तथा जिसकी हत्या हो रही है वह उसका अपना बेटा था। अब पन्ना का अगला कार्य आरम्भ हुआ। पन्ना ने अपने मारे गये बच्चे के टुकडों को उठाया, एक कपडे में लपेटा तथा उस का अन्तिम सस्कार करने के नाम से उसे भी वीरा नदी के तट पर ले गयी तथा वहा पर उसका अन्तिम संस्कार कर दिया। अब प्रश्न था उदय की रक्षा तथा उसके पालन का, उसके भरण – पोषण का! यह उसके लिए एक बहुत बडी चिन्ता की बात थी। वह बालक उदय को लिए स्थान स्थान पर भटक रही थी, कई लोगों से सम्पर्क कर रही थी किन्तु कोई इस विपत्ति को अपने गले डालने को तैयार न हो पा रहा था। अन्त में वह मेवाड के एक सरदार के पास पहुंची। यह सरदार उस भामाशाह का पिता था, जिस भामाशाह ने अपने मेवाड की रक्षा के लिए अपना सारा धन महाराणा प्रताप को अर्पित किया था। उसमें भी अपने पिता के ही संस्कार थे, जिस कारण अपना धन देश के अर्पित किया। उसके इस पिता का नाम था आसाशाह। इस आसाशाह ने उदयसिंह की रक्षा तथा उसके लालन पालन का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया। सत्य कभी छुपा नहीं करता। इस बात का ही परिणाम था कि कुछ काल पश्चात ही चित्तौड के सैनिकों को पता चल गया कि उदयसिंह जीवित है। अब तक उदयसिंह बडा हो गया था तथा युद्ध कौशल में भी प्रवीण हो गया था,। बडे सम्मान के साथ चितौड के वास्तविक राजा को वहां की सेनाए आदर पूर्वक लेकर चित्तौड आई तथा उन्हें सिंहासन पर बैठाया गया, सत्ता सौंपी गई। उदयसिंह को चितौड की गद्दी पर बैठा देख पन्ना के मन को अत्यधिक सन्तोष हुआ। आज उसका वह सपना साकार हो गया था,जिसे पूरा करने के लिए उसने अपनी ही सन्तान का बलिदान दिया था। आज इस गद्दी पर उदय को बैठे देख वह अपने आप को धन्य मान रही थी, तथा अपने बालक के बलिदान पर उसे गर्व हो रहा था। ऐसी ही त्यागी व तपस्वी माताओं का नाम, जिन्होंने अपनी सन्तान को अपने ही हाथों देश के लिए बलिदान किया, का नाम तो स्वर्णाक्षरों में पिरोना आवश्यक हो जाता है। उसके नाम की माला फेरना अपने में विशेष ही महत्व रखता है।

१०४ –शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी
२०१०१०
गाजियाबाद .चलवार्ता ०९७१८५२८०६८

www.thearyasamaj.org

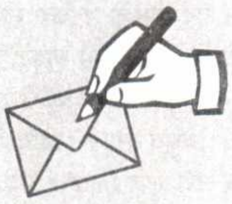

पत्र/कविता

जिसको मंजिल का पता रस्ता वही बनाय

सूरत बदल कर सोचते, तुम जीते इस बार।
पर सीरत बदली नहीं, तुम हारे हर बार।।

अब तो 'सॉरी' बन गया, बहुत बड़ा हथियार।
गलती अब अधिकार है, कह 'सॉरी' हर बार।।

जो भी तुमको मिल रहा, मान उसे उपकार।
जिसे न कोई छीन ले, वह तेरा अधिकार।।

पढ़े लिखे सब ज्ञान से, ऊपर अनुभव मान।
बिन सामान्य ज्ञान के, ज्ञान सकल अज्ञान।।

पुस्तक में जो लिख दिया, सत्य तुला पर तोल।
कसो कसौटी पर उसे, तभी लगाना मोल।।

जाति सुधारक का सदा, करते लोग विरोध।
चोट सवारथ पर लगे, लगता तब अवरोध।।

जिसको मंजिल का पता, रस्ता वही बनाय।
चलता अपनी राह जब, कोई बीच न आय।।

चमक दमक से दीखता, बड़ा भव्य सा रूप।
देखा उसे समीप जब, लगने लगा कुरूप।।

दुनिया उसको मानती, बहुत बड़ा इंसान।
बेचे जो ईमान को, गिरा हुआ लो मान।।

नरेन्द्र आहूजा विवेक
602 जी.एच 53 सैक्टर 20,
पंचकूला (हरियाणा)

पं. लक्ष्मण जी आर्योपदेशक रचित बृहद् उर्दू जीवनचरित 'मुकम्मल जीवनचरित्र महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती' का प्रकाशन-वर्ष?

प्रा. राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' ने पं लक्ष्मण जी आर्योपदेशक रचित बृहद् उर्दू जीवनचरित 'मुकम्मल जीवनचरित्र महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती' का परिश्रमपूर्वक हिन्दी अनुवाद एवं सम्पादन कर उसे दो भागों में 2012–2013 ई. में प्रकाशित किया है। लगभग 1300 से अधिक पृष्ठों के इस हिन्दी ग्रन्थ में वैसे तो प्रा. जिज्ञासु जी ने 'लेखक–परिचय', 'प्रकाशकीय', 'सम्पादकीय' आदि में पर्याप्त बहुत कुछ लिखा है, और यह भी लिखा है कि– ''इस (उर्दू) ग्रन्थ के दो संस्करण छपे थे'' (भाग 1, पृष्ठ 18), परन्तु ये दो संस्करण कब–किस वर्ष प्रकाशित हुए थे, इसका उल्लेख मुझे प्रा. जिज्ञासु जी द्वारा अनूदित–सम्पादित इस हिन्दी ग्रन्थ 'सम्पूर्ण जीवन–चरित्र' में कहीं दिखाई नहीं दिया। जिस मूल उर्दू ग्रन्थ का यह अनुवाद है, उस मूल ग्रन्थ के प्रकाशन –वर्ष का उल्लेख इसमें होना अपेक्षित है।

डॉ. भवानीलाल भारतीय जी के 'आर्य लेखक कोश' के पृष्ठ 248 पर ग्रन्थ–निर्देश के पश्चात् कोष्ठक में (1976) दिया गया है, और आगे लिखा है– 'वैदिक मैगजीन (मार्च 1917) में इस ग्रन्थ की प्रशंसापूर्ण समालोचना छपी है। 'इससे अनुमान किया जा सकता है कि पं. लक्ष्मण जी का मूल उर्दू ग्रन्थ प्रथम बार मार्च 1917 ई. से पहले 1916–17 ई. में (सम्भवतः आर्य पुस्तकालय लाहौर से) प्रकाशित हुआ होगा। परन्तु 1917 वि. सम्वत् में तो 1919–20 ई. का वर्ष पड़ता है। अतः मुझे लगता है कि सम्भव है कि डॉ. भारतीय जी के ग्रन्थ में कोष्ठक में दी गई वर्ष संख्या 1916 ई के स्थान पर मुद्रण भूल से (1976) छप गई हो, अर्थात् 1 के स्थान पर 7 छप गया हो। अगर ऐसा हुआ है तो यह अनुमान दृढ़तापूर्वक किया जा सकता है कि पं. लक्ष्मण जी रचित मूल उर्दू ग्रन्थ 1916 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसका दूसरा उर्दू संस्करण कब छपा था, इसके बारे में 'आर्य लेखक कोश' में कोई संकेत नहीं है।

अच्छा होता अगर प्रा. जिज्ञासु जी ने ही दोनों उर्दू संस्करणों के प्रकाशन–वर्ष का निर्देश अपने द्वारा अनुदित–सम्पादित हिन्दी ग्रन्थ में कर दिया होता । यह अपेक्षित आवश्यक भी था।

अगर ऐसा कोई निर्देश प्रा. जिज्ञासु जी ने अपने ग्रन्थ में कही पर किया है और मैं उसे ढूँढने में असफल रहा हूं, तो जिन्हें यह ज्ञात है वे कृपया मुझे सम्बन्धित भाग एवं पृष्ठ संख्या सूचित करें, मैं सूचित करने वाले का प्रसन्नता पूर्वक आभारी रहूँगा।

भावेश मेरजा
8/17–टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
भरुच, गुजरात–392015

****

आस्था और विश्वास

मेरी पत्नी अस्वस्थ चल रही थीं। डॉक्टरों ने ठीक होने में असमर्थता व्यक्त कर दी थी। 10–12 दिनों से दोनों आँखें बंद रहती थी और बोलना भी बंद हो गया था। लेकिन मृत्यु नहीं हो रही थी।

मैंने महामृत्युंजय मंत्र का जाप 108 बार कराया फिर गीता का 18वाँ अध्याय संस्कृत एवं हिन्दी में पढ़कर सुनवाया। दोनों कार्य, आर्य पुरोहित से, ऊँची आवाज में उनके कान के पास, बैठाकर कराये। 1000 रुपये उन पर न्यौछावर करके किसी गरीब परिवार को दिए ताकि इनके दुख दूर हो जाएं और मृत्यु हो जाए।

तीन घण्टे के बाद उनके सांस लेने की गति धीमी होनी शुरू हुई। 15 मिनट के बाद सांस लेने बंद हो गई। डॉक्टर को बुलाया गया। उन्होंने टार्च से देखने के बाद मृत्यु हो जाने की पुष्टि कर दी। उनकी आयु 72 वर्ष थी।

आस्था और विश्वास से यह कार्य कराया गया जो सफल रहा। ईश्वर दिवंगत आत्मा को शान्ति और सद्गति प्रदान करें।

आई.डी. गुलाटी
18/186, टीचर्स कॉलोनी बुलंदशहर
मो. 08958778443

आस्था और विश्वास में सूक्ष्म अन्तर है और उससे आगे श्रद्धा को भी जानना और समझना चाहिए–सम्पादक

****

आयुर्वेद का चमत्कार

"स्वयं अनुभव कर के देखा कि यदि 'चाय, काफी, अण्डा, माँस, मछली, शराब, रिफाइन, एल्युमीनियम पात्र, प्रिसरेवेटिव, सूर्योदय पीछे सोना व सूर्यास्त पीछे देर से खाना छोड़ इस विधि को अपना सदा स्वस्थ रहें।' 'सूर्य से पूर्व उठ' कोसा जल पी, सैर शौच जा व्यायाम प्राणायाम करें। स्नान से पूर्व, तिलतेल नाक, सिर, नाभि, घुटने, पैर तली अंगूठे में तेल लगाएं। दांतो को रोगमुक्त करने हेतु कपड़ छान नमक को सरसों तेल में मिला अंगुली से मालिश कर कुछ देर पीछे कुल्ला करें।

आचार्य आर्य नरेश
उद्‌गीथ स्थली हिमाचल प्रदेश

****

www.thearyasamaj.org

मुरलीधर डी.ए.वी. अम्बाला शहर में आयोजित वार्षिक उत्सव

मुरलीधर डी.ए.वी. सै. स्कूल में वार्षिकोत्सव "स्पन्दन" सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर श्री जे. पी. शूर, निर्देशक डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति नई दिल्ली मुख्य अतिथि रहे। श्रीमती नीता खेरा, सदस्य, हरियाणा लोक सेवा आयोग, समारोह की विशिष्ट अतिथि के रूप में उपिस्थत रहीं। डी.ए.वी. गान के पश्चात् दीप प्रज्ज्वलन से इस सांस्कृतिक सन्ध्या का शुभारम्भ हुआ। प्राचार्य डॉ. आर.आर. सूरी ने मुख्य अतिथि व विशिष्ट अतिथि का स्वागत किया। उत्सव में 10 CGPA अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण होने वाले 80 विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया एवं 5000 रुपये राशि योग्यताभत्ता के रूप में प्रदान की गयी। कक्षा 5 से 9 तक के 177 A1 ग्रेड प्राप्त करने वालों छात्रों को भी पुरस्कृत किया गया। कक्षा 12 के 38 विद्यार्थियों को 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने पर पुरस्कृत किया गया। विभिन्न क्षेत्रों में विशेष उपलब्धि प्राप्त करने वाले 15 विद्यार्थियों को 2100 रुपये नकद राशि पुरस्कार स्वरूप प्रदान की गई। सर्वश्रेष्ठ एथलीट आशिका एवं अनुराग को भी पुरस्कृत किया गया। गवर्नर से सम्मान प्राप्त विद्यालय की डॉन्स टीम को पुरस्कृत किया गया तथा विद्यालय की बैण्ड टीम की 26 छात्राओं को भी इस अवसर पर सम्मानित किया गया।

सरस्वती वन्दना नारी सशक्तिकरण, विमुद्रीकरण जैसे विषयों पर गीत व नृत्य की प्रस्तुति के साथ–साथ वर्तमान में आर्य समाज के नियमों की आवश्यकता समझाने वाली नाटिका विद्यार्थियों ने प्रस्तुत की। इस समारोह में स्वच्छ भारत अभियान के अन्तर्गत नदियों की स्वच्छता की तरफ ध्यान आकर्षित करने वाली नृत्य नाटिका "गंगा अवतरण" की प्रस्तुति ने दर्शकों का मन मोह लिया। वृद्धाश्रम व बाल श्रामिकों के विरूद्ध आवाज़ उठाते हुए नृत्य नाटिकाएँ दर्शकों ने बहुत पसन्द कीं।

प्राचार्य डॉ. आर.सूरी ने वर्ष भर की रिपोर्ट प्रस्तुत की। विशिष्ट अतिथि श्रीमती नीता खेरा ने विद्यालय की उपलब्धियों एवं कार्यक्रमों के सुन्दर प्रदर्शन पर बधाई दी एवं अभिभावकों को भाग्यशाली कहा कि उनके बच्चे इस विद्यालय में विद्यार्थी हैं।

मुख्य अतिथि श्री जे.पी. शूर, निर्देशक, डी.ए.वी. ने विद्यालय की प्रगति पर हर्ष व्यक्त करते हुए भविष्य में भी उन्नति के नए आयामों को छूने की कामना की। उन्होंने प्राचार्य, अध्यापकगण, छात्र एवं अभिभावकों को हार्दिक बधाई दी एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ दीं।

आर्य समाज अलवर ने लगाया चिकित्सा एवं जाँच शिविर

स्वतंत्रता सेनानी छोटू सिंह आर्य, संस्थापक अध्यक्ष, आर्य कन्या विद्यालय समिति, अलवर की स्मृति में आर्य समाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर के तत्वावधान में जन सहयोग से 86वाँ मल्टी स्पेशिलिटी चिकित्सा एवं जाँच शिविर का आयोजन श्री छोटू सिंह आर्य धर्मार्थ हॉस्पिटल स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में लगाया गया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता, प्रधान आर्य कन्या विद्यालय समिति थे। अध्यक्षता श्री अमर मुनि जी ने की एवं विशिष्ट अतिथि कै. रघुनाथ सिंह थे।

86 वें मल्टी स्पेशिलिटी चिकित्सा एवं जाँच शिविर में डॉ. देशबन्धु गुप्ता, डॉ. डी. सी. शर्मा, डॉ गोपाल गुप्ता नेत्र रोग विशेषज्ञ, डॉ अभिनव सेठी, दन्त रोग विशेषज्ञ, डॉ. इन्दु गुप्ता, डॉ. मुकेश कोछड़, डॉ. बी.एल. सैनी (हौम्योपैथी) एवं वैद्य भगवान दास मित्तल आदि द्वारा निःशुक्ल परामर्श दिया गया। आवश्यकतानुसार सभी को निःशुल्क परामर्श एवं दवाइयाँ दी गईं।

शिविर में रोगियों की मधुमेह एवं ब्लड प्रेशर की निःशुल्क जाँच हुई। हिमोग्लोबिन, यूरिन कम्पलीट, थायराइड, पी एस ए, लिपिडप्रोफाइल, एचबी ए 1 सी, लीवर फंक्शन, किडनी फंक्शन, ई.सी.जी. इको, एक्स रे, टी.एच.एस., विटामिन डी, बी 12 की जाँच क्योरवैल डायग्नोस्टिक सैन्टर द्वारा की गईं।

शिविर में गुर्दें (किडनी) का बिना सर्जरी के आयुर्वेदिक दवाइयों द्वारा पथरी के इलाज किया गया। बच्चों को कुपोषण की आयुर्वेदिक दवाइयाँ दी गईं। पेट सम्बन्धी बीमारी, कब्ज, गैस, दर्द का इलाज किया गया।

ताइक्वांडो प्रतियोगिता में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, यमुनानगर अव्वल रहा

विद्यालय के लिए यह अत्यन्त गौरव का विषय रहा जब ताइक्वांडों खिलाड़ियों ने अपने विद्यालय का परचम कुरुक्षेत्र में फहराया। ताइक्वांडो स्पोर्ट्स एसोसिएशन हरियाणा के तत्वावधान में कुरुक्षेत्र में हरियाणा स्टेट ताइक्वांडो प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियागिता में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, यमुनानगर के ताइक्वांडो खिलाड़ियों ने एक बार फिर अपनी खेल प्रतिभा का लोहा मनवाते हुए 5 स्वर्ण, 2 रजत एवम् 2 काँस्य तथा पूमसे प्रतियोगिता में 6 स्वर्ण तथा 2 रजत पदक मिलाकर कुल 17 पदकों के साथ बालिकाओं के वर्ग तथा पूमसे प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर न केवल अपने विद्यालय का अपितु जिले का नाम भी रोशन किया।

विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री वी.एस. ठाकुर ने विजयी खिलाड़ियों को बधाई देते हुए कहा कि हमारे लिए गर्व का विषय है कि हमारे विद्यालय के खिलाड़ियों ने राज्य स्तर पर इतनी बड़ी सफलता प्राप्त की है। राष्ट्रीय स्तर पर खेलने के लिए भी इन खिलाड़ियों को जो सुविधाएँ चाहिएँ, हम वे भी प्रदान करेंगे। विजयी खिलाड़ियों में केशव (स्वर्ण), हिमाद्री (स्वर्ण), अंजलि (स्वर्ण), ध्रुव (स्वर्ण), सुरभि (स्वर्ण), शौर्य (रजत), मानवी (रजत), पावनी (काँस्य), हिमाँशु (काँस्य)। पूमसे प्रतियोगिता में :– केशव (स्वर्ण), हिमाँशु (रजत), शौर्य (काँस्य), हिमाद्री (रजत)।

शौर्य (स्वर्ण), केशव (स्वर्ण), बालिका वर्ग में हिमाद्री (रजत), पावनी, हिमाद्री (स्वर्ण), पावनी (स्वर्ण), कनिष्ठ वर्ग में ध्रुव (स्वर्ण) एवम् जतिन ने (रजत) पदक प्राप्त किया।

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 11/12-01-2017
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. पटेल नगर ने आर्य समाज (अनारकली) में किया वार्षिक यज्ञ

प्रतिवर्ष की भाँति वार्षिक हवन यज्ञ की शृंखला में डी.ए.वी. स्कूल पश्चिमी पटेल नगर ने आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग में छात्र–छात्राओं द्वारा हवन करवाने का आयोजन किया गया। लगभग 50 बच्चों ने यज्ञ ब्रह्मा के साथ मंत्रों का उच्चारण किया। यज्ञ के बाद हॉल में संगीत आचार्य के नेतृत्व में बच्चों ने एक के बाद एक भजन प्रस्तुत कर वातावरण को संगीतमय बना दिया। उपस्थित आर्य लोगों ने भजनों का बहुत आनन्द लिया तथा प्रशंसा भी की। प्रादेशिक सभा के वयोवृद्ध उप–प्रधान श्री रामनाथ सहगल जी ने बच्चों को आशीर्वाद दिया। प्रमुख वक्ता श्री चन्दशेखर शर्मा जी ने अपने व्याख्यान में चाणक्य नीति के आधार पर बच्चों को पाँच सूत्र बताए जिन्हें वे अपने जीवन में सुचारु रूप से अपना कर उन्नति कर सकते हैं। उनकी शिक्षाप्रद बातें जीवन में धारण करने योग्य थीं। जिन बच्चों का दिसम्बर मास में जन्मदिन था, उन्हें फूलों का हार पहनाकर शास्त्री जी ने आशीर्वाद दिया। सब बच्चों को दयानन्द जी की जीवनी की एक–एक पुस्तक उपहार में दी गई। पाठशाला की ओर से प्रसाद वितरण किया गया तथा कार्यक्रम सम्पन्न हो गया।

डी.ए.वी. पूण्डरी में स्वामी श्रद्धानन्द को श्रद्धाञ्जलि दी गई

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पूण्डरी के प्रागंण में अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस को संसार का सबसे श्रेष्ठतम कर्म–यज्ञ–कर के मनाया गया। प्राचार्या श्रीमती साधना बख्शी ने इस कार्यक्रम के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। विद्यालय के छात्र व छात्राओं ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन से सम्बन्धित भाषण प्रस्तुत किए। विद्यालय के संस्कृत अध्यापक श्री रवींद्र कुमार शास्त्री द्वारा उनके जीवन पर सारगर्वित भाषण दिया। उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन से सम्बंधित अनेक प्रेरणादायक घटनाओं को प्रस्तुत कर श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर दिया। स्वामी जी द्वारा चलाए गए शुद्धि आन्दोलन, छुआ–छूत, बाल विवाह, नारी शिक्षा व अंग्रेज़ों की कूटनीति के विरोध में किए गए कार्यों की विस्तार से चर्चा की। शास्त्री जी ने सभी को प्रेरित किया कि अपने जीवन में सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि आदि को अवश्य ही पढ़कर व पढ़ाकर अपने व बच्चों को संस्कारवान बनाएं।

अंत में प्राचार्या श्रीमती साधना बख्शी जी द्वारा अध्यक्षीय भाषण प्रस्तुत किया गया तथा स्वामी जी द्वारा बताए गए रास्ते पर चलने की प्रेरणा दी गई।

डी.ए.वी. यूनिट-7, भुवनेश्वर में आयोजित हुई सी.बी.एस.ई आंचलिक विज्ञान प्रदर्शनी

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, यूनिट–7, भुवनेश्वर के ऐन्जेल्स ब्लाक में तीन दिनों तक चलने वाली विज्ञान प्रदर्शनी का समापन हो गया। प्रदर्शनी का मुख्य विषय राष्ट्र निर्माण में विज्ञान, टेकनोलोजी एवं गणित का अवदान था। इस अवसर पर मुख्य अतिथि सी.बी.एस.ई, भुवनेश्वर के रिजनाल अफिसर श्री एल.एल. मीना जी ने अपने कर कमलों से प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। इस समारोह में कुल 47 स्कूलों के विद्यार्थियों ने 75 प्रोजेक्ट (प्रकल्प) प्रदर्शित किए।

इस प्रदर्शनी का मुख्य उद्देश्य था बच्चों में विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में रुचि उत्पन्न करना, पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाना। प्रदर्शनी में खाद्य, स्वास्थ्य, यातायात के साधनों की जानकारी तथा साधारण जीवन–यापन में गणित का प्रयोग से जुडे प्रक्लप दिखाए गए। ब्लू पावर टेक्नोलोजी, वाटर हारवेस्टिंग, फर्म फाग एंड हुमिड एयर, कम्पोस्ट मेकर, आक्वा ओरो फूएल, कॉन्सर पाराडकस, रोल ऑफ पाराडकस, रोल ऑफ मेथमैटिक्स इन मेडीकल साईंस एण्ड एगरीकलचर से जुड़े प्रकल्प प्रदर्शित किए गए।

इस मौके पर विद्यालय के सभापति श्री मदनमोहन पण्डा, प्रधानाचार्या डॉ. श्रीमती भाग्यवती नायक, आंचलिक निर्देशक, ओडिशा जोन–1, के डॉ. केशव चंद्र शतपथी, दूसरे विद्यालयों के प्रिंसिपल तथा शिक्षक–शिक्षिकाएँ उपस्थित थे।

समापन समारोह के अवसर पर 17 उत्कृष्ट प्रोजेक्ट पुरस्कारों से सम्मानित किए गये जिन्हें राष्ट्रीय स्तर पर नई दिल्ली में प्रदर्शित किया जाएगा। मुख्य अतिथि आर.सी.ओ. एफ के आंचलिक निर्देशक डॉ. श्री गगनेश शर्मा जी ने बच्चों द्वारा बनाये गये प्रक्लपों की सराहना करते हुए विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए छात्रों को प्रेरित किया। विद्यालय की वरिष्ठ शिक्षिका श्रीमती सूर्यकांती जेमा ने धन्यवाद अर्पण किया। विद्यालय की प्रधानाचार्या डॉ. श्रीमती भाग्यवती नायक की देखरेख में उक्त प्रदर्शनी खूब सफल रही एवं लोगों द्वारा सराही गई।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – पूनम सूरी